एक एनाबैप्टिस्ट मसीही कौन है ?

■

पामर बेकर
Palmer Baker

■

WHAT IS AN ANABAPTIST CHRISTIAN?
एनाबैप्टिस्ट विश्वासी—एक परिचय
हिन्दी अनुवादक —— रेव्ह. जय प्रकाश मसीह

Published By:
Yeshu Ke Paas, Inc.
Hindi Masih Patra Prakashan
(A Hindi Publication Of Hindi Christian Magazine 'Chetna' & Other Christian Books)
2379 Cochise Drive, Acworth, GA – 30102 (USA)

YKP Serial Number:
YKP – 0777 – 12 – 2011 – 1000

ISBN: 0 – 9764933 – 5 -7

First Hindi Edition:
December 2011

© Hindi Copyright:
Yeshu Ke Paas, Inc.

Hindi Translator:
Rev. Jai Prakash Masih

Original English Edition Author:
Palmer Baker

Hindi Translation Authorized By:
James R. Krabill
Senior Executive for Global Ministries and Editor for *Missio Dei*

Hindi Proofreader:
Asha Sharovan/Rev. Jai Prakash Masih
Composer, Printer and Distributor:
Yeshu Ke Paas, Inc.
Editor & Publisher:
SHAROVAN

What is an Anabaptist Christian? Hindi Translation
Proudly Published In USA

संपादकीय

हरेक मनुष्य अपने आप में कुछ न कुछ विश्वास अवश्य ही रखता है। और मनुष्य का यह विश्वास उसके जीवन को वैसा ही ढाल भी देता है। हां, यह और बात है कि मनुष्य का यह विश्वास धार्मिक हो अथवा अधार्मिक? लेकिन उसके जीवन का परिणाम भी उसके विश्वास के अनूरूप ही अच्छा या बुरा हो सकता है। मसीही विश्वास का केन्द्र बिन्दु भी एक मनुष्य ही है। मनुष्य का यदि ऐसा विश्वास नहीं होता तो क्यों नूह अनदेखे परमेश्वर की आवाज़ सुनकर जल प्रलय से सुरक्षित होने के लिये लकड़ी की विशाल नाव बनाता? क्यों शाऊल का जीवन ऐसा परिवर्तित होता कि वह उस मसीहियत की ख़ातिर अपना जीवन कुरबान करता जिसका कभी वह जानी दुशमन था? विश्वास ही से इब्राहीम परखे जाने के समय में, अपने पुत्र इसहाक को बलिदान चढ़ाने से भी पीछे नहीं हटा। विश्वास ही के कारण मूसा ने खुद को फिरौन की बेटी का पुत्र कहलाने से इनकार कर दिया। अपने विश्वास ही के कारण मूसा ने इस्राएलियों को लाल समुद्र की सूखी मिट्टी पर चलाया और पार उतर कर फिरौन की तलवार से सबकी रक्षा की। विश्वास ही से यरोही नगर की शहरपनाह गिर पड़ी। विश्वास ही के कारण राहब वेश्या आज्ञा न माननेवालों के साथ नाश नही हुई। विश्वास ही कारण यहूदी राजाओं ने राज्य जीते, नबियों ने धर्म के काम किये, प्रतिज्ञा की हुई वस्तुयें पाईं, सिंहों के मुंह बंद किये, आग में सुरक्षित बचे, निर्बलता में बलवंत हुये और इसी विश्वास के कारण एनाबैप्टिस्ट मसीहियों ने अपने जीवनों का बलिदान चढ़ाया, क्योंकि उन्हें मालुम था कि यह संसार उनके योग्य नहीं है, तथा अच्छी गवाही दी।

जिस विश्वास और लगन के कारण मेनोनाइट के अगुवों ने अपने समय में अपनी कलीसिया के उत्थान के लिये कुछ सिद्धान्त, संस्कृति और नियम दिये, वे उस काल और संस्कृति में एक मसीही होने का क्या अर्थ रखते थे, इस बात को आज के मेनोनाइट मसीही के लिये जानना बहुत आवश्यक है। आज के समय में हमारा मसीही होने का क्या विश्वास, तात्पर्य और आधार होना चाहिये? केवल बालिगता में फिर से बपतिस्मा लेने से ही समस्त बातों की इति नहीं हो जाती। एनाबैप्टिस्ट मसीहियों को भी दूसरी मसीही परम्पराओं और संस्कृतियों से ईश्वरीय अनुग्रह, विश्वास, सुसमाचार की महत्ता और मसीही समाज में सहभागी होने के तौर-तरीकों के बारे में सीखना होगा और साथ ही साथ अपनी एनाबैप्टिस्ट विचारधाराओं

को भी यीशु ख्रीष्ट के अनुसरण के साथ दूसरी मसीही परम्पराओं के मानने वालों को बताना और सिखलाना होगा। यह सही है कि समय के साथ किसी भी संस्था के कार्यक्रमों और उद्देश्यों में परिवर्तन आ सकते हैं, लेकिन जिन महत्वपूर्ण और विशेष मान्यताओं के साथ संस्था की नींव रखी जाती है, उनको सदैव जीवित रखने के अथक प्रयास भी करने होंगे। यह मान्यतायें जिनसे एक कलीसिया या संस्था का जन्म होता है, उनकी पाकीज़गी पर किसी भी तरह की आंच भी नहीं आनी चाहिये। सचमुच में यह मान्यतायें इसकदर पवित्र होती हैं, जिन्हें सदैव पवित्र रख कर ही उनका आदरमान किया जा सकता है।

एनाबैप्टिस्ट विश्वासियों के लिये उनका मुख्य केन्द्रबिन्दु: यीशु ख्रीष्ट ही उनका विश्वास, मंडली की आपसी भाई-चारे की संगति और मेल-मिलाप के साथ कार्य करने का उत्साह; उपरोक्त मुख्य विषयों को लेकर ही इस पत्रिका के मूल लेखक पामर बेकर ने अपना प्रयास किया है, तथा इसका हिन्दी अनुवाद रेव्ह. जय प्रकाश मसीह के सौजन्य से आपके हाथों में है। जहां तक मेरी अपनी दृष्टि है, इसके अनुवाद में सरल हिन्दी और सुपाठ्यता का विशेष ध्यान अनुवादक ने अवश्य रखा है। इसके साथ ही पाठक को सरल तरीके से समझाने के लिये कठिन साहित्यिक शब्दों के साथ कोष्ठकों में अंग्रेजी के शब्दों का भी सहारा लिया गया है। आपके लिये यह छोटी सी पुस्तक अत्यन्त महत्वपूर्ण और उपयोगी साबित हो, यही मेरी कामना है।

एक एनाबैप्टिस्ट मसीही कौन है ?

WHAT IS AN ANABAPTIST CHRISTIAN?

पामर बेकर
PALMER BAKER

परिचय—

मसीही युग के प्रारंभ से ही ऐसे विश्वासी अस्तिव में रहे हैं, जिनका विश्वास एनाबैप्टिस्ट विचारधारा पर आधारित है। यहां तक कि आज भी लगभग सभी मसीही समुदाय और कलीसिया में और हर एक मंडली में भी ऐसे विश्वासी पाये जाते हैं, जिनके मसीही विश्वास की समझ एनाबैप्टिस्ट परंपरा के समतुल्य है। एनाबैप्टिस्ट विचारधारा मसीहीपन की एक छाप है। जिस प्रकार से एंग्लीकन, बैप्टिस्ट, या लूथरन मसीही होते हैं उसी प्रकार से एनाबैप्टिस्ट मसीही भी हैं।

'एनाबैप्टिस्ट' एक ऐसा नाम है जो कि एक अविष्कार किया हुआ नाम है, जिसका अर्थ है— **'फिर से बपतिस्मा देने वाले'**। यह 16 वीं सदी के उन मसीहियों को दिया गया एक नाम है, जिन्होंने बाल-बपतिस्मा की विधि में थोड़ा ही महत्व देखा और इसलिये उन्होंने एक दूसरे को विश्वास का अंगीकार करने पर, एक प्रौढ़ के रूप में फिर से बपतिस्मा दिया। यही एनाबैप्टिस्ट विश्वासी वर्तमान मेनोनाईट कलीसिया तथा कई अन्य स्वतंत्र कलीसियाई परंपराओं के अग्रदूत या अग्रगामी बने।

एनाबैप्टिस्ट या मेनोनाईट विश्वासी भी अन्य विश्वासियों की तरह कई सामान्य सिद्धांतों पर विश्वास करते हैं। वे एक ऐसे व्यक्तिगत त्रिएक परमेश्वर पर विश्वास करते हैं जो कि पवित्र और करूणामय परमेश्वर है। वे एक ऐसे उद्धार पर विश्वास करते हैं जो कि अनुग्रह के द्वारा पश्चताप करने से मिलता है। वे ख्रीष्ट की मानवता और ईश्वरत्व पर विश्वास करते हैं। वे परमेश्वर के वचन के सर्वोच्च अधिकार पर विश्वास करते हैं जो कि पवित्र आत्मा के द्वारा प्रेरित परमेश्वर का जीवित वचन है। वे पवित्र आत्मा की सामर्थ पर और एक ही ख्रिष्टियानी कलीसिया पर विश्वास करते हैं जो कि ख्रीष्ट की देह है। परंतु इन सिद्धांतों पर उनका विश्वास दूसरों की अपेक्षा कुछ अलग है।

कभी कभी ऐनाबैपप्टिस्ट लोगों को प्रोटेस्टेंट धर्म -आंदोलन का वाम-पक्ष या (left wing), भी कहा जाता है। उनका उत्थान एक बड़े सामाजिक और आर्थिक उथल-पुथल के बीच में हुआ, और वे मार्टिन लूथर, उलरिच ज्विंगली, और जॉन कैल्विन के द्वारा चलाये गये धर्म-आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिये समर्पित थे। एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीहियों ने पूरे इतिहास में इस बात पर जोर दिया है कि वे मसीही विश्वास की वाचा में एक दूसरे के साथ मांडलिक संगति में बंधे रहकर अपने प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट का अनुसरण करेंगे, और अहिंसा का पालन करते हुए आपसी मतभेदों को दूर करने का प्रयत्न करेंगे। क्या आप भी ऐनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही हैं?

उस समय के प्रमुख धर्म-सुधारकों ने हमें इस स्पष्ट समझ तक ला दिया कि हमें उद्धार विश्वास से केवल परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा मिलता है। परंतु कई रूपों में उन्होंने अपने आप को केवल उन्हीं विचारधाराओं और संरचनाओं तक ही सीमित रखा जिन्हें चौथी और पांचवीं सदी में सम्राट कान्सटेंटाइन ने और संत ऑगस्टीन ने प्रतिपादित किया था। उसी प्रकार से मेनोनाईट मसीहियों ने भी अपने आपको सीमित करते हुए केवल उन्हीं बातों पर ध्यान केंद्रित कर दिया जिसे मेनो सायमन तथा सोलहवीं सदी के

अन्य एनाबैप्टिस्ट अगुवों ने प्रारंभ किया था। उस काल और उस संस्कृति में मसीही होने का क्या अर्थ था? इस विषय में हम विभिन्न तत्कालीन सुधार आंदोलनों का अध्ययन करने के द्वारा सीख सकते हैं। यह जानने के लिये कि हमारे समय में मसीही होने का आधार और तात्पर्य क्या है, हमें अंत में यीशु ख्रीष्ट के पास ही वापस लौटना होगा जो कि हमारे विश्वास का कर्ता और सिद्ध करने वाला हमारा प्रभु है।

मसीहियत की प्रमुख समस्या इसके कई डिनॉमिनेशन नहीं हैं, परंतु मूल समस्या यह है कि वे एक दूसरे से सीखना नहीं चाहते। एनाबैप्टिस्ट मसीहियों को भी अन्य दूसरे मसीही परंपराओं से तथा संस्कृतियों से परमेश्वरीय अधिराटता (sovereignty) और अनुग्रह, विश्वास वचन की महत्ता, और वृहद् समाज में सहभागी होने के तौर-तरीके आदि के विषय में काफी कुछ सीखना चाहिये। साथ ही साथ अन्य मसीही परंपराओं को भी एनाबैप्टिस्ट मसीहियों से, प्रतिदिन के जीवन में ख्रीष्ट के अनुसरण, ख्रीष्ट केंद्रित दृष्टिकोंण से वचन की व्याख्या और प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट को प्राथमिकता देने जैसी एनाबैप्टिस्ट विचारधाराओं को अपनाना चाहिये।

प्रभु की देह एक है, पर उसके कई अंग हैं। यदि उस देह का कोई एक समूह अपने विशिष्ठ गुणों को और विचारों को खो देता है तो, यह ऐसा होगा मानों उन्होंने अपना नमक खो दिया है। अपनी पुस्तक **'डिफरेंशिएट और डाई'** (Differentiate or Die) में जैक ट्राऊट, ने लिखा है कि, 'यदि किसी संस्था के पास देने के लिये कुछ विशिष्ठ नहीं है तो वह निश्चित रूप से मरेगी।'1 एनाबैप्टिस्ट मसीहियों के पास देने के लिये विशेष बात कौन सी है, और वे दूसरों से क्या प्राप्त कर सकते हैं?

किसी भी संस्था या समुदाय के कार्यक्रम और उद्देश्य बदल सकते हैं, परंतु जिन विशेष या मूल मान्यताओं के कारण किसी संस्था का जन्म होता है तो वे मान्यतायें उस संस्था के लिये **'पवित्र'** होती हैं और वे बदली नहीं जा सकतीं।2 एनाबैप्टिस्ट

विश्वासियों के लिये वे **'पवित्र'** मान्यतायें कौन सी है। इस छोटी पुस्तिका में उन्हें तीन मूल वक्तव्यों के द्वारा समझाया गया है। और वे निम्नलिखित है:

1. यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है।

2. मांडलिक संगति हमारे जीवन का केंद्र है।

3. मेल-मिलाप हमारे कार्यो का केंद्र है।

एनाबैपप्टिस्ट विचारधारा के अनुसार मसीही होने का अर्थ है, यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास करना, मांडलिक संगति का अंग बनना, और मेल मिलाप का रूख अपनाना।3 कुछ बातें जिनके लिये एनाबैपप्टिस्ट लोगों ने अपना जीवन व्यतीत किया और मृत्यु को भी गले लगाया, उन्हें अधिकांश मसीही आज मानकर चलते हैं। और एनाबैप्टिस्ट लोगों के कुछ अन्य रीति-रिवाज और शिक्षायें अन्य लोगों के लिये आज भी चुनौतीपूर्ण व असमंजस में डालने वाली हो सकती हैं। परंतु आज के विश्व में जबकि अधिक से अधिक लोग यीशु ख्रीष्ट के पीछे विश्वासयोग्य होकर चलने की कोशिश कर रहे हैं, तो इस दिशा में उन्हें एनाबैप्टिस्ट विश्वास की समझ व रीति रिवाजों से काफी सहायता मिल रही है।

इस छोटी पुस्तिका में जिन तीन सिद्धांतों को विकसित किया जा रहा है, वह सन् **1943** में **हेरल्ड एस बैंडर** के द्वारा लिखित, **'दी एनाबैपटिस्ट विज़न'** (The Anabaptist Vision) की आधुनिक व्याख्या है जो कि उस समय इस विषय की एक प्रसिद्ध पुस्तक रही। उस समय **हेरल्ड एस बैंडर 'अमेरिकन सोसायटी ऑफ चर्च हिस्ट्री'** के प्रेसिडेंट भी थे।4 हेरल्ड बैंडर ने बाइबल की तथा एनाबैप्टिस्ट इतिहास की अपनी समझ के अनुसार यह समझाया कि;

1. मसीहियत चेलापन है। यह प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे चलने वाली बात है।

2. कलीसिया मसीही भाईचारा है या एक परिवार के समान है। कलीसिया के सदस्य न केवल यीशु ख्रीष्ट के प्रति समर्पित होते हैं,

वे व्यक्तिगत रूप से और स्वेच्छा से एक दूसरे के प्रति भी समर्पित होते हैं।

3. यीशु ख्रीष्ट के अनुयाईयों में प्रेम और अहिंसा की नैतिकता होती है। एक परिवर्तित जीवन के साथ वे अहिंसा व लड़ाई का परित्याग करते हुए मेल-मिलाप का जीवन अपनाते हैं।

इन तीनों मान्यताओं का प्रारंभ एक साथ कई स्थानों में हुआ। इस पुस्तिका में यही बताया गया है कि इतिहास में इन मान्यताओं का विकास किस प्रकार से हुआ, तथा यह भी सुझाया गया है कि वे आज के संसार में किस प्रकार से लागू होती हैं। उन सलाहों को इस पुस्तक में विरोधात्मक वक्तव्यों के रूप में प्रश्नों के साथ प्रस्तुत किया गया है, ताकि उन पर चर्चा की जा सके। मैं यह महसूस करता हूं कि मैंने प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट लोगों के सकारात्मक योगदान पर अधिक जोर दिया है और उनकी कमजोरियों या नकारात्मकताओं को अल्पतम किया है। मेरा उद्देश्य यह है कि मैं खोजियों को प्रश्न पूछने का और प्रत्युत्तर देने का अवसर प्रदान करूं कि, **'एक आदर्शवादी एनाबैप्टिस्ट मसीही कैसा दिखाई देता है?'**

मैं 'पेसिफिक साउथवेस्ट मेनोनाईट कॉनफ्रेंस' के भूतपूर्व कॉनफ्रेंस सेवक जेफ राईट का आभारी हूं, जिन्होंने कि इस प्रकार के कार्य को अंजाम देने की कल्पना की। मैं कई अन्य धर्मवेताओं का भी अभारी हूं जिनमें मेरे साले सहाब थियोडोर ए वेदर्स, मेरी विवेकी पत्नी ऑड्री, मायरन ऑग्सबर्गर, डेविड मार्टिन, जॉन रॉथ, जेम्स रेमर, आंद्रे गिंनग्रिच स्टोनर, एलन क्राइडर, मॉरलिन क्रॉफ्ट, जॉन रेंपल, डेविड फ्रिमर, नील ब्लॉव, और जेम्स क्रेबिल प्रमुख हैं; जिन्होंने लेखन प्रक्रिया के दरम्यान् अनेकों सुझाव दिये। तौभी यह जानते हुए कि कई मसीही जो इस पुस्तिका को पढ़ेंगे, वे इस पुस्तक में वर्णित स्थिति से अपने आपको एक बीच की स्थिति में पायेंगे, इसलिये, इस पुस्तिका की पूरी जिम्मेदारी मैं व्यक्तिगत रूप से अपने ऊपर लेता हूं।

मूल मान्यता क्रमांक नंबर 1 यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है

■

Jesus

यीशु ख्रीष्ट ने लगभग सन् 30 ईस्वी में अपनी सेवकाई प्रारंभ की जब कि उसने अपने लिये चेलों का एक झुंड एकत्रित किया। ये चेले यीशु के साथ तीन वर्षों तक जीवनयापन करते हुये उसकी सेविकाई में सदा साथ रहे। उन्होंने यह आवलोकन किया कि उसने किस प्रकार से निर्धनों की चिंता की, बीमारों को चंगा किया, अंधों को आंखें प्रदान कीं, पापियों को क्षमा किया, और लोगों की भीड़ को शिक्षा दी। इन सेवकाई के वर्षों में और पुनरूत्थान के बाद भी यीशु उनके विश्वास और जीवन का केंद्र बना रहा। उस जमाने के शिक्षकों, तथाकथित प्रभुओं और उद्धार देनेवालों के विपरीत, उन्होंने यीशु ख्रीष्ट को ही अपना गुरू और उद्धारकर्त्ता करके ग्रहण किया या उस पर विश्वास किया।

उन प्रारंभिक चेलों के लिये केवल विश्वासी या उपासक बनने के बदले में एक मसीही बनना ज्यादा महत्वपूर्ण था। इसका अर्थ यह था कि, आत्मा से परिपूरित होकर प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट की आज्ञा का पालन करना। यीशु ख्रीष्ट के प्रति अपने समर्पण के कारण और उनके जीवनों में पवित्र आत्मा की निरंतर उपस्थिति के कारण अन्य लोगों ने ध्यान दिया कि उनके जीवन का रूख और उनकी जीवन-शैली यीशु ख्रीष्ट की सदृष्यता में परिवर्तित हो रही है। यदि आपको उन प्रथम चेलों से पूछने का अवसर

मिलता तो, मेरा पूरा विश्वास है कि वे बड़े ही उत्सह के साथ यह कहते कि,

'यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है।'

उसके बाद लगभग **250** वर्षों तक, प्रारंभिक मसीही अपने मध्य में यीशु ख्रीष्ट की आत्मा का अनुभव करते रहे। फिर उसके बाद अगली सदियों में, मसीही विश्वास में कुछ ऐसे परिवर्तन आये जिसके कारण यह इस संसार का एक और तथाकथित धर्म बनकर रह गया।**5** इस परिवर्तन के लिये दो व्यक्ति मानों प्रतीक बन गये। उनमें से एक राजनितिज्ञ था और दूसरा एक धर्मवेता या थियोलोजियन।

Constantine

कांन्सटेंटाईन, जो कि एक राजनितिज्ञ था **6**, वह रोमी राज्य का सम्राट था। उसे एक आत्मिक अनुभव प्राप्त हुआ जिसके अनुसार उसने क्रूस का एक दर्शन देखा था। उसके बाद से उसने मसीहियों को सताना बंद कर दिया और उसने मसीही धर्म को सारे रोम के लिये राजधर्म का दर्जा दे दिया। तौभी उसके राज्यकाल में और उसके बाद भी, लोग अपने जीवन जीने की शैली के बदले अपने विश्वास वचन (creed) के द्वारा अधिक जाने जाते थे, जिन्हें कि वे अपने में रखने का दावा करते थे।

Augustine

ऑगस्टीन, एक धर्मवेता था **7**, जो कि कुछ समय बाद प्रसिद्ध हुआ। उसे जीवन परिवर्तन का एक जबरदस्त अनुभव हुआ, और कुछ लोग उसे पाश्चात्य कलीसिया का सबसे बड़ा धर्म वेता मानते हैं। परंतु धीरे-धीरे मसीही संसार में कुछ अलग ही विचारधारायें व प्रवृत्तियां पनपने लगीं जो कि प्रारंभिक चेलों की विचारधाराओं से एकदम विपरीत थीं। प्रभु यीशु ख्रीष्ट के जीवन और उसकी सेवकाई पर अपना ध्यान केंद्रित रखने के बदले कलीसिया ने अपना प्राथमिक ध्यान ख्रीष्ट की मृत्यु की ओर लगाया। इसी बीच में प्रेरितों का विश्वास वचन अपनी प्रसिद्धि की चरम सीमा पर आ गया, जिसमें कि यीशु ख्रीष्ट की सेवकाई और शिक्षा का कोई उल्लेख नहीं है। यह कहने के बदले कि 'यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है', ऑगस्टीन के अनुयायी कहने लगे, 'ख्रीष्ट की मृत्यु ही हमारे विश्वास का केंद्र है।' इस कारण

मसीहियत में बड़े ही नाटकीय परिवर्तन आये। जबकि प्रारंभिक मसीही समुदाय एक अल्पसंख्यक वर्ग के रूप में हमेशा गुप्त रूप से आराधना करता था, अब वे आलीशान आराधनालयों में आराधना करने लगे। जबकि पारंभिक सदियों में नये विश्वासियों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाता था, प्रौढ़ होने पर बपतिस्मा दिया जाता था, और वे मंडली के सदस्य बनते थे, अब सभी लोग यहूदियों को छोड़कर, बालकपन में ही बपतिस्मा पाकर कलीसिया के अंग बन जाते थे, जो कि रोमी राज्य का एक हिस्सा बन गया था। जबकि प्रारंभिक कलीसिया में यीशु के पीछे चलने को महत्व दिया जाता था, अब सही सिद्धांत, विस्तृत अनुष्ठानों और अपने आपको शत्रुओं से बचाने को प्राथमिकता दी जाने लगी। इससे पहिले प्रारंभिक कलीसिया के सदस्य अपने विश्वास को प्रतिदिन अपने पड़ोसियों में बांटते थे, परंतु अब सुसमाचार-प्रचार का अर्थ मूल रूप से 'मसीही साम्राज्य' की सीमा को आगे बढ़ाना हो गया। जबकि प्रारंभिक मसीही सामरिक सेवकाई का तिरस्कार करते थे। ऑगस्टीन की मृत्यु के समय तक रोमी सेना में केवल मसीहियों को ही भर्ती किया जाता था।

Martin Luther

सन् **1200** से लेकर सन् **1500** ईस्वी के बीच कई चिंतित लोग और समूह यह महसूस करने लगे कि उद्धार और स्थानीय कलीसिया के विषय में प्रचलित विचारधाराओं में गंभीर ख़ामियां आ गई हैं। **मार्टिन लूथर** एक जर्मन पुरोहित था जिसने कि ऑगस्टीनियन धर्मसिद्धांत की उच्च शिक्षा ली थी, वह धर्म सुधारकों में से एक था। उलरिच ज्विंगली, स्वीट्जरलैंड का एक पासबान था और जॉन कैल्विन एक 'रिफॉर्मड्' धर्मवेता था। ये सब दुसरे धर्म -सुधारक थे। ये सब अगुवे कई एक महत्वपूर्ण परिवर्तनों के साथ सामने आये।

मार्टिन लूथर विशेष रूप से तात्त्कालीन पुरोहितों और पोप के क्रिया-कलापों से क्षुब्ध था, जो कि उन दिनों में कार्यों और क्षमा-पत्रों के आधार पर लोगों को शोधन-स्थान (purgatory) से छुटकारा और क्षमा प्राप्त करने का आश्वासन दे रहे थे। **31** अक्टूबर सन् **1517** को उसने इस विषय पर सार्वजनिक वार्तालाप

आमंत्रित करने की मनसा से उसने **95** मूल विषयों या तर्कों की सूचि को विटेंनबर्ग जर्मनी के गिरजेघर के दरवाजे पर ठोंक दिया। उसके इसी कृत्य ने प्रोटेस्टेंट धर्मआंदोलन की आधारशिला रखी।**8**

लूथर और ज्विंगली ने इस बात पर ज़ोर दिया कि मसीही विश्वास और कार्यों के लिये बाइबल का अधिकार ही अंतिम है, और उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि हमें उद्धार केवल विश्वास से, परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा ही मिलता है। तौभी इस उद्धार के लिये यही समझा गया कि यह केवल अनंत जीवन से ही संबंध रखता है। किसी ने इसे संपूर्ण उद्धार के बदले में केवल आत्मा का उद्धार कहा है। जबकि मसीही लोगों से अपेक्षा की जाती थी कि वे परमेश्वर और पड़ोसियों की विश्वासयोग्यता से सेवा में आगे बढ़ें। इस विषय में कलीसिया की शिक्षा में कोई दम नहीं था कि मसीही लोग अपने प्रतिदिन के जीवन में ख्रीष्ट का अनुसरण करें और मंडली में एक दूसरे की सेवा के लिये समर्पित रहें।

उलरिच ज्विंगली के कई एक विद्यार्थी, जिनमें कॉनरॉड ग्रेबल, फेलिक्स मॉज, और जॉर्ज ब्लावरॉक शामिल थे, स्वीट्जरलैंड के ज्यूरिख शहर में निरंतर बाइबल अध्ययन के लिये एकत्रित हुआ करते थे। उसी समय, हांन्स हूट, हांन्स डेंक, पिलग्रम मारपेक और याकोब हूटर दक्षिणी जर्मनी और मोराविया में उसी प्रकार की आत्मिक यात्रा में आगे बढ़ रहे थे। उसके कुछ ही समय बाद नीदरलैंड में **मेनो सायमन** नामक एक भूतपूर्व रोमन कैथोलिक पुरोहित था, जो वहां भी इसी प्रकार के समूह का निर्देशन कर रहा था। बाइबल के इन अभ्यार्थियों ने यीशु ख्रीष्ट और उसके प्रथम चेलों के विषय में बाइबल का अपना अध्ययन जारी रखा। इब्रानियों **12:2** में लिखा हुआ वचन कि, **'और विश्वास के कर्त्ता और सिद्ध करनेवाले यीशु की ओर ताकते रहे'**; उनमें से बहुतों के लिये प्रमुख वचन बन गया। मनो सायमन के लिये कुरिंथियों की पहली पत्री अध्याय **3: 11** में लिखा हुआ वचन, 'क्योंकि उस नेव को छोड़ जो पड़ी है, और वह यीशु मसीह है, कोई दूसरी नेव नहीं डाल सकता।' ——उद्धेश्य वचन बन गया। कालांतर में, यीशु

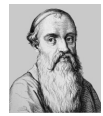
Menno Simmons

ख्रीष्ट के पर्वतीय उपदेशों को पवित्र आत्मा की सामर्थ के साथ मसीही जीवन के लिये आदर्श समझा जाने लगा।

जबकि इन प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट मसीहियों ने प्रेरितों के विश्वास वचन, तथा लूथर और ज्विंगली के अधिकांश प्रवचनों का समर्थन किया, परंतु वे उससे भी आगे जाना चाहते थे। वे 'विश्वास से धर्मी ठहराये जाने' की अपेक्षा 'नया जन्म प्राप्त करने' के विषय में अधिक बातें करना चाहते थे। जबकि वे इस बात को पूरी तरह मानते थे कि उद्धार केवल परमेश्वर के अनुग्रह ही से मिलता है, फिर भी वे एक मसीही के जीवन में और अधिक मौलिक आज्ञाकारिता का प्रत्युत्तर देखना चाहते थे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि, उद्धार जो कि प्रभु यीशु ख्रीष्ट और पवित्र आत्मा की सामर्थ के द्वारा संभव होता है, उसके कारण एक व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक, व आर्थिक जीवन में आमूल परिवर्तन आना चाहिये। और प्रौढ़ावस्था का बपतिस्मा, इसी उद्धार और आमूल परिवर्तन का प्रमाण बन गया। यदि आप उन प्रारंभिक ऐनाबैप्टिस्ट मसीहियों से पूछते, तो मेरा पूरा विश्वास है कि वे यीशु के प्रारंभिक चेलों के साथ मिलकर यही कहते कि, **'यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है।'**

इन बातों का आज हमारे लिये क्या लगाव है? एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही यीशु ख्रीष्ट के विषय अपनी समझ को तीन महत्वपूर्ण तरीकों से अपने जीवन में लागू करना चाहते हैं;

1. अपने प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट का अनुसरण।

वास्तव में मसीही होने का अर्थ आत्मिक अनुभव प्राप्त करने, किसी विश्वास वचन को स्वीकारने, या परमेश्वर के सामने धर्मी ठहरने से भी बढ़कर है। मसीही होने का अर्थ है प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे चलना। एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही कहते हैं, 'मसीहियत एक शिष्यता है' जर्मनी भाषा की अभिव्यक्ति के अनुसार इसका तात्पर्य है, 'यीशु ख्रीष्ट के पीछे-पीछे चलना'। *Nachfolge Christi* —हांन्स डेंक जो कि एक

प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट अगुवा था, उसने इसे स्पष्ट शब्दों में उस समय व्यक्त किया, जब उसने कहा कि, 'एक व्यक्ति यीशु ख्रीष्ट को सच्चाई से तब तक जान नहीं सकता, जब तक कि वह अपने प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे नहीं चलेगा, और एक व्यक्ति अपने प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे तब तक नहीं चल सकता जब तक कि वह उसे सचमुच में जान नहीं लेता।'[10]

एनाबैप्टिस्ट परंपरा के अनुसार उद्धार का अर्थ है पुराने जीवन से परिवर्तित होकर एक ऐसे जीवन में प्रवेश करना जो यीशु ख्रीष्ट की आत्मा और कार्यों के नमूने के समान हो। उद्धार केवल हमारे प्रति परमेश्वर के रूख में बदलाव ही नहीं है, बरन् यह परमेश्वर के प्रति, लोगों के प्रति और इस संसार के प्रति हमारे रूख और कार्यों में परिवर्तन है। इस प्रकार का परिवर्तन पवित्र आत्मा के हमारे भीतर निवास करने से ही संभव हो सकता है, जो कि चेलों को प्रतिदिन के जीवन में ख्रीष्ट के पीछे चलने की सामर्थ प्रदान करता है। कई मसीही ऐसे हैं जो अपने आपको उद्धार पाने के बाद भी एक आशाहीन पापी के रूप में देखते हैं, जो कि एक विजयी परिवर्तित जीवन व्यतीत नहीं कर सकते। कुछ लोग कहते हैं कि, 'मैं किसी से भिन्न नहीं हूं, केवल एक क्षमा किया गया व्यक्ति हूं।' एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही इस प्रकार की मानसिकता से असहमति प्रगट करते हैं। वे यह विश्वास करते हैं कि यीशु की आत्मा और उसकी शिक्षा समर्पित शिष्यों की सहायता करते हैं कि वे एक परिवर्तित जीवन के साथ बुराई की सामर्थ पर विजयी हो सकें। उन्हें यह प्रोत्साहन दिया जाता है कि वे प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के उग्र अनुयायी बनें।

2. ख्रीष्ट–केंद्रीय दृष्टिकोंण से बाइबल की व्याख्या।

बाइबल के विषय में कई मसीहियों का दृष्टिकोंण एक प्रकार से एकदम सपाट सा है। इस का अर्थ यह है कि परमेश्वर के वचन को पुराने नियम में जिस प्रकार से मूसा ने समझा था वह उसी प्रकार से अधिकारयुक्त है, जैसे कि नये नियम में ख्रीष्ट के द्वारा

कहे गये वचन हैं। जब कभी किसी राजनैतिक या सामाजिक विषय पर चर्चा की जाती है, जैसे कि, युद्ध, मृत्युदंड, या फिर किसी पथभ्रष्ट व्यक्ति के साथ बर्ताव करने की चर्चा की जाती है, तब बाइबल के प्रति जिनका दृष्टिकोंण सपाट सा होता है, वे अक्सर पुराने नियम को ही अपने विश्वास और कार्यों का आधार मान लेते हैं; यद्यपि उनके द्वारा उदधृत वचनखंड यीशु ख्रीष्ट की शिक्षा के विपरीत होते हैं।

कई लोग बाइबल की व्याख्या आयोजन व्यवस्था के दृष्टिकोंण से करते हैं। परमेश्वर की ईच्छा को जानने के लिये पहले उन्हें यह जानना जरूरी होता है कि दिया गया वचनखंड किस काल के लिये प्रगट किया गया है। इस विचारधारा के अनुसार यीशु ख्रीष्ट के पर्वतीय उपदेशों को सामन्यतया: ख्रीष्ट के द्वितीय आगमन के बाद परमेश्वर के राज्य के लिये ही उपयुक्त ठहराया जाता है। उनका कहना है कि अभी वर्तमान काल में ख्रीष्ट केवल हमारी आराधना चहता है, प्रतिदिन की आज्ञाकारिता नहीं।

एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही संपूर्ण बाइबल की व्याख्या ख्रीष्ट–केंद्रित नैतिक दृष्टिकोंण से करना चाहते हैं। यीशु ख्रीष्ट को परमेश्वर और परमेश्वर की ईच्छा के संपूर्ण प्रगटीकरण के रूप में देखा जाता है, जिसका अर्थ यह है कि कभी-कभी यीशु की शिक्षायें बाइबल में पहिले दी गई शिक्षाओं से भी श्रेष्ठ हो सकती हैं। यीशु ने स्वंय अपने शब्दों में कहा कि, 'तुम सुन चुके हो ...परंतु मैं तुमसे कहता हूं कि ...' (मत्ती **5:21, 27, 31, 33, 38** और **43**)। उसी प्रकार इब्रानियों की पत्री का लेखक उदघोषित करता है कि, 'पूर्व युग में परमेश्वर ने बापदादों से थाड़ाथोड़ा करके और भांतिभांति से भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा बतें कीं...वह उसकी महिमा का प्रकाश, और उसके तत्व की छाप है।' -इब्रा. **1: 1-3** पीटर केहलर नामक एक मेनोनाईट मिश्नरी ने कहा कि, 'यदि बाइबल केवल एक ही काम करे जो कि यीशु ख्रीष्ट से मेरा परिचय हो, तो मेरे लिये उतना ही पर्याप्त है।'**11**

एनाबैप्टिस्ट दृष्टिकोंण रखने वाले सभी मसीही इस बात को मानते हैं कि हर एक पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है परंतु वे इसे लेकर एकदम से कठोर रूप से शाब्दिक नहीं हैं। वे इसी प्रयत्न में रहते हैं कि लिखित वचन और यीशु की आत्मा को एक सही कार्यकारी संतुलन में रखें। उनका विश्वास है कि पुरी बाइबल की व्याख्या ख्रीष्ट की आत्मा के अधीन होकर किया जाना चाहिये। इस क्षेत्र में यीशु के अनुयायी अक्सर उसी समय गड़बड़ाते हैं जब वे या तो लिखित वचन को आत्मा की अपेक्षा अधिक महत्व देते हैं या फिर आत्मा को वचन से भी ऊंचा उठाते हैं। वचन और आत्मा में बराबरी का संतुलन होना चाहिये।12

जबकि एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही परमेश्वर के वचन को, जानकारी का परम श्रोत मानते हैं, उसी के साथ ही साथ वे यीशु ख्रीष्ट को, अपने विश्वास और जीवन के लिये अंतिम अधिकार भी मानते हैं। वही वचन का देने वाला प्रभु भी है और व्यक्तिगत् तथा सामाजिक नैतिकता, दोनों के लिये ही नियामक या मानकीय है। बाइबल का कोई भी वचन अपने आप में अकेले अधिकार नहीं हो सकता, जब तक कि वह ख्रीष्ट की शिक्षा की आत्मा के साथ इमानदारी से जुड़ा हुआ न हो। इस प्रकार जब एनाबैप्टिस्ट–मानसिकता के मसीही किसी कठिन नैतिक समस्या का सामना करते हैं, तो वे सबसे पहले उस विषय में प्राथमिक अगुवाई प्राप्त करने के लिये यीशु ख्रीष्ट के पास जाते हैं और तब अतिरिक्त पृष्ठभूमि और समझ पाने के लिये वचन का सहारा लेते हैं। यदि उन्हें दो वचनों में विरोधाभास का अहसास हो तो वे इसके लिये यीशु ख्रीष्ट को निर्णायक बनने देते हैं।

3. यीशु ख्रीष्ट, प्रभु भी और उद्धारकर्ता भी।

कई मसीही यीशु ख्रीष्ट को पापों से छुटकारा प्राप्त करने के लिये अपना व्यक्तिगत उद्धारकर्ता मान तो लेते हैं परंतु वे अपने प्रतिदिन के जीवन में यीशु के पीछे चलने में अधिक जोर नहीं देते। वे यीशु को अपनी व्यक्तिगत बुरी आदतों से छुटकारा पाने के लिये

अपना प्रभु तो मानते हैं, परंतु जब वे किसी बड़ी सामाजिक या राजनैतिक समस्या का सामना करते हैं, तो वे अपनी आज्ञाकारिता, अपने नौकरीदाता, किसी राजनैतिक अगुवा, या किसी सैन्य अधिकारी के प्रति दिखाते हैं। इसके फलस्वरूप आज अधिकांश मसीही यीशु ख्रीष्ट के बदले में किसी सांसारिक अधिकार या अगुवे के प्रति ही अधिक आज्ञाकारी होते हैं।

एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही यह भी विश्वास करते हैं कि एक मसीही को किसी भी सरकार की आज्ञा का पालन उसी सीमा तक करना चाहिये जहां तक कि मसीही शिष्यता इसकी अनुमति देती है। किसी भी सरकार का उद्धेश्य जीवन की रक्षा करना तथा निरपेक्ष संसार में न्याय व्यवस्था को बनाये रखना होता है। नियमों के पालन करने का अर्थ यह नहीं है कि हम सरकार की किसी भी आज्ञा का पालन दृष्टिहीन होकर करें। जबकि हमारी परम-निष्ठा केवल यीशु ख्रीष्ट और परमेश्वर के राज्य के लिये ही समर्पित है, इसलिये कभी कभी हमें सरकार की आज्ञा का उलंघन भी करना पड़ सकता है क्योंकि वह आज्ञा यीशु की शिक्षा की आत्मा के विपरीत है। जब कभी कैसर के तौर-तरीकों और यीशु ख्रीष्ट के तौर-तरीकों में अंतर हो, तो हम प्रारंभिक चेलों के साथ कहते हैं कि, 'मनुष्यों की आज्ञा से बढ़कर परमेश्वर की आज्ञा का पालन करना ही कर्तव्य-कर्म है।'**13**

——प्रेरितों के काम 5: 29

सारांश में हम कह सकते हैं कि, एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही ऐसे विश्वासी हैं जो यही कोशिश कर रहे हैं कि वे;

1. प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे चलें।
2. वचन की व्याख्या यीशु की आत्मा में होकर करें।
3. अपनी परम निष्ठा यीशु ख्रीष्ट के प्रति प्रगट करें।

यीशु ख्रीष्ट उनके विश्वास का केंद्र है, क्या आप भी एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के एक मसीही हैं?

मूल मान्यता क्रमांक नंबर 2 मांडलिक संगति हमारे जीवन का केंद्र है

■

Jesus

जब **यीशु ख्रीष्ट** ने अपनी सेवकाई प्रारंभ की तब उसने जो सबसे पहला काम किया वह है; उसने लोगों का एक समूह या एक संगति अपने साथ एकत्रित की। उसने पतरस, अंद्रियास, और तब याकूब और यहून्ना को अपने साथ हो लेने के लिये आमंत्रित किया। कुछ ही समय बाद उसके कई अनुयायी हो गये जिनमें से उसने **12** चेलों को चुना। वे उसके साथ रहकर उस समय तक सीखते, खाते, यात्रा करते रहे जब तक कि पिंतेकुस्त के समय तक वे एक नये समाज या कलीसिया की नींव के रूप में सामने नहीं आ गये। प्रेरितों के काम की पुस्तक अध्याय **2** में हम ध्यान देते हैं कि प्रारंभिक विश्वासी संगति के लिये दिन प्रतिदिन मिलते थे। वे केवल मंदिर में ही नहीं बरन् घरों में भी मिलते थे जहां वे आनंदित हृदय के साथ भोजन करते, परमेश्वर की स्तुति करते, और एक दूसरे की पहुनाई का आनंद उठाते थे।

नये नियम की कलीसिया ने उस समय की राजनैतिक व धार्मिक परिस्थिति में लोगों के लिये एक वैकल्पिक जीवन-शैली को उपलब्ध कराया। इस जीवन के विषय में मंदिर के अहातों में शिक्षा दी गई और घरेलू समूहों में उन बातों पर चर्चा करते हुए उन्हें अपने जीवन में लागू किया गया।

जब यीशु ने अपने चेलों को पारिवारिक संदर्भ में संबोधित किया तब यह स्पष्ट हो गया कि यीशु अपने चेलों से चाहता था कि वे केवल उस पर विश्वास ही न करें वरन् उनमें यह भावना भी हो कि वे एक दूसरे के होकर रहें। उनके जीवन को देखने वाले इस बात से आश्चर्यचकित थे कि परमेश्वर ने इन प्रारंभिक मसीही समूहों के द्वारा क्या किया। जो कुछ यीशु ख्रीष्ट ने उनके साथ रहते हुए करना प्रारंभ किया था उन कार्यों को आगे बढ़ाने के लिये उनके पास वरदान, अनुभूति, और हिम्मत भी थी। यदि आप यीशु के उन प्रारंभिक अनुयाइयों से पूछते तो मेरा पूरा विश्वास है वे कहते कि, **'ख्रीष्ट–केंद्रीय कलीसिया या संगति हमारे जीवन का केंद्र है।'**

Constantine

इस बात पर जोर देने के बदले कि कलीसिया विश्वासी भाई-बहिनों की एक संगति है जो कि बाइबल अध्ययन, संगति, प्रार्थना और आराधना के लिये एक साथ एक परिवार के रूप में मिलते हैं; सम्राट **कॉन्सटेंटाईन** ने कलीसिया को एक संस्था के रूप में प्रस्तुत किया जो कि बड़े अवैयक्तिक आराधनालयों में एकत्रित होती है। इसलिये अब तक जो धनवान लोग मसीही होने से इनकार करते थे या विरोध करते थे वे अब कलीसिया के साथ संबंधित होने के लिये राजी हो गये जो कि तात्कालीन सम्राट के साथ जुड़ी हुई थी। इस कारण चाहे लोग यीशु ख्रीष्ट के सच्चे अनुयायी नहीं भी थे तौभी बड़ी संख्या में लोगों को बपतिस्मा दिया गया। इसके फलस्वरूप, 'कलीसिया' को इस संसार में रहने के बदले में, 'यह संसार' कलीसिया में आ गया।

अपनी माता के प्रोत्साहन और उसकी सहायता से कॉन्सटेंटाईन ने रोम नगर में और यीशु ख्रीष्ट के जन्म और मरण स्थान में बड़े आलीशान गिरजे-भवन बनवाना शुरू कर दिया। शीघ्र ही छोटे बड़े सभी नगरों में गिरजे -भवन बनवाये गये। यह कहने के बदले में कि, 'ख्रीष्ट–केंद्रित कलीसिया हमारे जीवन का केंद्र है" मसीही लोग कहने लगे कि; 'गिरजे-भवन हमारे नगर के केंद्र हैं।' एक ऐसे समाज में रहते हुए जिसमें कि हर कोई अपने

आपको मसीही समझता था, **ऑगस्टीन** ने व्यक्तिगत रूप से अपने मसीही आज्ञाकारिता के जीवन को संवारने के लिये काफी संघर्ष किया। उसके और उसके अनुयाईयों के लिये यह जानना कठिन हो गया कि कौन ख्रीष्ट की देह का अंग है और कौन नहीं है। उसने कहा कि, 'गेहूं और जंगली दानें एक साथ बढ़ रहे हैं।'

Augustine

मांडलिक संगति में ख्रीष्ट की उपस्थिति का अनुभव करने के बदले में, ऑगस्टीन ने इस बात पर जोर दिया कि विश्वासियों को परमेश्वर की उपस्थिति का अनुभव संस्कारों के द्वारा करना चाहिये। इसी काल में एक ऐसे संस्कारीय विश्वास का विकास हुआ जिसके अंतर्गत यही समझा जाता था कि, मूल पाप से क्षमा पाने के लिये, बपतिस्मा के संस्कार की आवश्यक्ता होती है। और प्रति दिन के जीवन में पापों की क्षमा प्राप्त करने के लिये मिस्सा या दैनिक आराधना या मिस्सा (*mass*) की आवश्यक्ता होती है। जैसे- जैसे सदियां बीतती गईं, शोधन-स्थान से छुटकारा पाने की विचारधारा का विकास होता गया जिसके अनुसार संतों से प्रार्थना, निर्धनों को दान-दक्षिणा देना, या पोप से क्षमा पत्र ख्रीदने की प्रथायें चल निकलीं।

कालांतर में, यीशु ख्रीष्ट का होकर रहने की बात या मांडलिक संगति में एक दूसरे के प्रति समर्पित होकर रहने के सिद्धांतों को भुला दिया गया। इसी प्रक्रिया में जो लोग यीशु ख्रीष्ट के प्रति आज्ञाकारी होकर रहना चाहते थे और घनिष्ट मांडलिकता के जीवन का अनुभव करना चाहते थे, वे साधु या साधवी या भिक्षुक बनकर मठों और कॉनवेंटों में जाकर रहने लगे। इससे आम जनता के बीच में यह विचारधारा फैल गई कि सामान्य लोगों के लिये प्रतिदिन के जीवन में और मंडली की संगति में ख्रीष्ट–केंद्रिय जीवन व्यतीत करना असंभव है।

मार्टिन लूथर और अन्य धर्म सुधारकों ने पहले यही चाहा था कि कलीसिया में बाइबल के आधार पर सुधार लाया जाय। उन्होंने अपने आप को रोम से अलग कर लिया और अपने बाइबल प्रवचन में उन्होंने सब विश्वासियों के याजकपन पर जोर दिया।

Martin Luther

लूथर तथा ज्विंगली के कई अनुयाईयों ने भी अपने आपको तात्कालीन जमींदारी प्रथा से स्वतंत्र करना चाहा। उस समय जब कुछ किसानों ने जमींदारों और स्थानीय राजाओं के अन्यायपुर्ण कार्यों के विरूद्ध हथियार उठाया तब लूथर और ज्विंगली ने कानून व्यवस्था को बनाये रखने के उद्धेश्य से, प्रशासन वालों का साथ दिया। जबकि उन्होंने शासकों को निर्धनों और प्रजा के प्रति उनके कर्तव्यों को लेकर फटकारा, फिर भी अनजाने में उन्होंने कलीसिया और राज्य के बीच में एक नये गठबंधन की अधारशिला को रखा। इसी प्रक्रिया में उन्होंने अपने कई अनुयाईयों का विश्वास खो दिया।

किसानों ने लूथर और ज्विंगली को अपनी लड़ाई और राजनैतिक गतिविधियों और सुधार आदोलनों में हिस्सा लेने से रोक दिया। वे अपने मूल कलीसियाई संरचना और ऑगस्टीन के सिद्धांतों के साथ बने रहकर राजकीय कलीसिया की संस्थात्मक संरचना और राजनीति के साथ बने रहे, जिसके अनुसार बाल-बपतिस्मा कलीसिया में प्रवेश करने का प्रारंभिक संस्कार था। उस समय राज्य के द्वारा अनुशासन व्यवस्था बनाये रखने के लिये तलवार का सहारा उचित माना गया, और परमेश्वर की ईच्छा को जानने के लिये सपाट बाइबल की व्यक्तिगत व्याख्या को मान्यता प्राप्त थी।

Menno Simmons

धर्म-आंदोलन की असफलता के कारण **मेनो साईमन** तथा कई अन्य एनबैप्टिस्ट अगुवे काफी निराश हुए। वे नहीं चाहते थे कि कलीसिया का सुधार केवल कॉन्सटेंटाईन की संस्थात्मकता और ऑगस्टीन के सिद्धांतों तक ही सीमित रहे। वे चाहते थे कि कलीसिया का पुनर्निर्माण उसकी मूल नये नियम काल की सदृष्यता और प्रारूप में हो। उनका विश्वास था कि कलीसिया इस संसार में एक स्वतंत्र और वैकल्पिक समाज की तरह हो।

जिस तरह से प्रारंभिक मसीहियों को सताया गया था, उसी तरह सताव के कारण प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट मसीही भी, इस बात के लिये बाध्य हो गये कि वे अपनी संगति के लिये, अर्थात् बाइबल अध्ययन, प्रार्थना और आराधना के लिये गुप्त रूप से

एकत्रित हों। जब वे गुप्त रूप से घरों में या अन्य स्थानों में मिलते थे तो अक्सर अपने बीच में ख्रीष्ट की उपस्थिति का अनुभव करते थे। उस समय जब नये विश्वासी यीशु ख्रीष्ट पर अपना विश्वास लाते और प्रतिदिन के जीवन में उसके पीछे चलने की शपथ लेते थे तब उन्हें बपतिस्मा दिया जाता था और वे किसी विश्वासी झुंड के अंग बन जाते थे, जहां पर परस्पर संगति और सहभागिता काफी प्रगाढ़ होती थी।

इन छोटे झुंडों की गवाही अपने-अपने समाज या नगर में काफी प्रभावशाली रही। एनाबैप्टिस्ट आंदोलन का प्रारंभ किस प्रकार से हुआ, इस विषय पर जापान के एक पासबान तकाशी यमाडा ने **62** डॉक्टरल या धर्माचार्य उपाधि के लिये किये गये शोध- कार्यों का गहन अध्ययन करने के बाद, यह कहा कि, प्रारंभिक कलीसिया और एनाबैप्टिस्ट विश्वासियों में एक विशेष समानता यह देखने को मिलती है कि वे अपने समय में छोटे-छोटे समूहों में एकत्रित होते थे, जहां कि वे एक दूसरे का सामना करते हुए एक-दूसरे को इतना समर्थ बनाते थे कि वे इस संसार का सामना कर सकें।'**14**

एनाबैप्टिस्ट मसीही बार-बार एक ऐसी सामर्थ के विषय चर्चा करते थे, जिसके द्वारा एक फर्क जीवन संभव है। वे यह अपेक्षा करते थे कि सभी सदस्य 'एक संत सदृष्य जीवन' व्यतीत करें, विषेश रीति से अगुवे लोग। उनके अनुसार एक मसीही केवल वह नहीं है जो कि दोषमुक्त होकर जीवन व्यतीत करता है, बरन एक सच्चा मसीही वह है जो एक ऐसा जीवन व्यतीत करता है, जो कि आत्मा से भरा हुआ नैतिक जीवन हो। वे लोग जो प्रतिदिन के जीवन में ख्रीष्ट के पीछे नहीं चलते थे, या एक ऐसे जीवन के पीछे चलते जो कि ख्रीष्ट की सदृष्यता में न हो तो ऐसे लोगों को संगति से निकाल दिया जाता था।

एनाबैप्टिस्ट लोगों ने मंडली या कलीसिया को ऐसे विश्वासियों के झुंड के रूप में देखा जो यीशु ख्रीष्ट के साथ और एक दूसरे के साथ एक वाचा की संगति में जुड़े हुए हैं। उस समय के रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट कलीसिया के अगुवों; दोनों ने ही

एनाबैप्टिस्ट विश्वासियों को स्थापित कलीसिया के विरूद्ध एक बड़े खतरे के रूप में देखा। यही कारण है कि उन दिनों में बहुत सारे एनबैप्टिस्ट विश्वासियों को कैद में डाला गया और उन्हें घोर यातनायें दी गईं। इस दरम्यान लगभग **4000** लोग अपने विश्वास के लिये शहीद हो गये क्योंकि, या तो उन्हें पानी में डुबो दिया गया या लकड़ियों से जलाया गया।**15**

इन प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट लोगों में काफी भिन्नतायें भी थीं। उनमें से कुछ लोग अंत समय के लिये आवश्यकता से अधिक चिंतित थे। कुछ लोग अपने बचाव के लिये हिंसा का प्रयोग करने से भी पीछे नहीं हटे। जरमनी देश के मंन्सटर शहर में कुछ एनाबैप्टिस्ट इस दिशा में इतना आगे बढ़े कि उन्होंने अपने शहर की नगर पालिका को ही बदल कर उनके स्थान पर **12** प्राचीनों को नियुक्त कर दिया, जो कि अपने आपको नया इस्त्राएल कहने लगे, बहु-विवाह की प्रथा को अपने बीच लागू कर दिया, और अपने बचाव के लिये हथियार उठा लिये। केवल एक अल्पसंख्यक एनाबैप्टिस्ट समूह के द्वारा किये गये इस प्रकार के क्रिया-कलापों ने तात्कालीन सच्चे एनाबैप्टिस्ट मसीहियों और मेनोनाईट मसीहियों की साख को घूमिल कर दिया। उन पथभ्रष्ट एनाबैप्टिस्ट लोगों के कुछ एक समूह आज भी यहां-वहां देखने को मिलते हैं।

प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट लोगों में निहित यीशु ख्रीष्ट के प्रति प्रबल समर्पण की भावना और एक दूसरे के प्रति प्रगाढ़ विश्वासयोग्यता ने उनकी सहायता की, कि वे इस संसार के संदर्भ में भी एक समर्पित और उच्च-कोटि का नैतिक जीवन व्यतीत कर सकें। यदि आप उनसे इस विषय में पूछते तो मेरा विश्वास है कि वे यही कहते कि,

'ख्रीष्ट–केंद्रीय मांडलिकता हमारे जीवन का केंद्र है।'

आज के संसार में एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही, ख्रीष्ट–केंद्रित मांडलिक संगति को तीन विशिष्ठ तरीके से समझते और उसमें जीवन बिताने की कोशिश करते हैं:

1. मांडलिक जीवन में क्षमा की परमावश्यक्ता——

यीशु ख्रीष्ट इस लिये आया कि हम जीवन पायें और बहुतायत का जीवन पायें। उसने बड़ी लगन से यह प्रार्थना की कि जिस प्रकार से वह और पिता एक हैं, उसी प्रकार से हममें भी एकता हो। आपसी संगति की गर्म-जोशी और उसके साथ सभी फायदे उस समय सामने आते हैं जब ख्रीष्ट की देह की संगति में लोग एक दूसरे के प्रति समर्पित होते हुए एक दुसरे से क्षमा याचना भी करते हैं। एक दूसरे के साथ पाप अंगीकार और क्षमा उन दीवारों को हटाते हैं जो कि परमेश्वर के साथ और एक दूसरे के साथ संगति में अवरोध लाते हैं। एनाबैप्टिस्ट विश्वासी यह विश्वास करते हैं कि मांडलिक जीवन को संवारने और आगे बढ़ाने के लिये **'क्षमा'** परम आवश्यक है।

मानवता की मूल समस्या आर्थिकता, शिक्षा या सामर्थ की कमी नहीं है। हमारी मूल समस्या यह है कि हम एक दूसरे को ठोकर पहुंचाते हैं। सृष्टि के प्रारंभ से ही, मनुष्य प्राणी ने व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से भी, परमेश्वर को और एक दूसरे को अपने कार्यों और अपने विचारों के द्वारा ठोकर पहुंचाई है। इसका प्रतिफल यह है कि परमेश्वर के साथ और एक दूसरे के साथ, और स्वंय हमारे अंत:करण के साथ तथा इस सृष्टि के साथ भी हमारा संबंध टूटा हुआ है।

किसी भी लगी ठोकर को दूर करने का निर्णायक पल तब आता है जब कोई भी एक व्यक्ति या समूह सच्चे हृदय से पश्चाताप करते हुए क्षमा याचना करते हैं। खेद की बाद यह है कि, गैर-मसीही संसार में यही प्रयत्न किया जाता है कि बिना क्षमा के बातों को भुला दिया जाय। ईमानदारी से अपनी कामजोरियों को मानकर क्षमा पाने के बदले में अक्सर अपनी गलतियों को नकारना या उनके लिये सफाई देना ही होता है।

2. मांडलिक जीवन, वचन की व्यख्या का आधार——

कई लोग वचन के अध्ययन को अपने व्यक्तिगत जीवन तक ही सीमित रखते हैं और तब वे दूसरों के समान उदघोषित

करते हैं कि उन्होंने वचन को समझ लिया है। जब कभी लोग व्यक्तिगत रीति से वचन की व्याख्या करने का दावा करते हैं, वे अक्सर वचन के विषय में भ्रामक और झूठी शिक्षाओं या विचारधाराओं के प्रवर्तक ठहरते हैं।

कई ऐसे भी मसीही हैं जो समझते हैं कि बाइबल की सही व्याख्या केवल प्रशिक्षित पासबान, पादरी, या बाइबल शिक्षक या उपदेशक लोग ही कर सकते हैं। इसके फल स्वरूप कई सामान्य लोग व्यक्तिगत रूप से बाइबल पठन व उसके लगाव की अवहेलना करते हैं।

एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही यह विश्वास करते हैं कि वचन का अध्ययन व्यक्तिगत रूप से और एक आत्मिक अगुवाई प्राप्त मांडलिक संगति के संदर्भ में भी होना चाहिये, जहां कि विश्वासी एक दूसरे को सलाह दे सकते हैं और एक दूसरे से सलाह ले भी सकते हैं। साधारणतया: मंडली के ऐसे सदस्य जो छोटे झुंडों में, बाइबल की कक्षाओं में, या किसी आत्मिक सम्मेलनों में ख्रीष्ट की आत्मा से भरपूर होकर एकत्रित होते हैं, वे लोग ही यह निर्धारित कर सकते हैं कि विशेष परिस्थितियों में बाइबल उनसे क्या कहती है।

3. आमने–सामने के छोटे झुंडों में मांडलिक संगति का अनुभव–

कभी-कभी कलीसिया का वर्णन दो पंखों वाली चिड़िया के रूप में किया जाता है। उसमें से एक पंख पूरी मंडली की आराधना करनेवाली सभा को कहा जाता है, जहां कि हम अपने परम पवित्र सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर के साथ अपना लंबवत् संबंध संवारते हैं। दूसरा पंख उन छोटे समूहों का प्रतितिनधित्व करता है जो एक-दूसरे को करीब में लाकर समानंतर संबंधों पर जोर देता है।**16** हमारे मांडलिक जीवन के लिये दोनों ही अति आवश्यक हैं।

मसीही जीवन के कुछ भाग ऐसे ही **12** या उससे कम लोगों के छोटे अंतरंग समूहों में अच्छी तरह पनपते हैं। यह उस समय काफी कारगर होता है जब हम एक दूसरे को परामर्श देते हैं या लेते हैं, सेवा-कार्य के लिये एक दूसरे के वरदानों को पहिचानते

हैं, या एक दूसरे की आनंदमय संगति का लाभ उठाते हैं। अच्छी स्वास्थ्य मंडलियां ऐसी ही संगति को जन्म देती हैं। अक्सर वे छोटे झुंडों के एक जाल में एक दूसरे से गुथी हुई होती हैं। कुछ लोग यहां तक कहने से पीछे नहीं हटते कि छोटे समूह कलीसियाओं की मूल ईकाई हैं।17

सारांश में यह कहा जा सकता है कि, एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के अनुसार मसीही, मसीही-संगति के अनुभव में **ख्रीष्ट–केंदिय मांडलिकता उनके जीवन का केंद्र है।** वे यही देखने की कोशिश करते हैं कि,

1. क्षमा उनके मांडलिक जीवन के लिये अति आवश्यक है।
2. वचन के अर्थ को समझने के लिये आपसी वार्तालाप करना और सामूहिक रूप से व्याख्या का प्रयत्न करना अति आवश्यक है।
3. कलीसियाई जीवन में प्रगति के लिये छोटे झुंडों का होना आवश्यक है।

यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास करना, कलीसिया का अंग बनकर रहना, और नये जीवन के अनुरूप चाल-चलन में जीना कलीसियाई संदर्भ की वास्तविकता है।18

क्या आप भी एक एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही हैं?

मूल मान्यता क्रमांक नंबर 3 मेल-मिलाप हमारे कार्यों का केंद्र है

Jesus

परमेश्वर ने अपने पुत्र **यीशु ख्रीष्ट** को पाप की समस्या के समाधान के रूप में भेजा। यीशु ख्रीष्ट उन सब लोगों का मेल-मिलाप करने आया जो परमेश्वर की ओर तथा एक दूसरे की ओर आना चाहते थे। उसने मनुष्यों के बीच में व्याप्त सब प्रकार के अन्याय और टूटे-पन को संबोधित किया, और उसने चेलों के एक समूह को प्रशिक्षित किया जो कि उसके मेल-मिलाप के राजदूत बने।

मांडलिक संगति में यीशु ख्रीष्ट ने मेल-मिलाप के लिये कुछ निश्चित कदम उठाने के लिये कहा, जिसका वर्णन हमें मत्ती रचित सुसमाचार अध्याय **18: 15-20** में मिलता है। चाहिये कि अपमानित व्यक्ति, व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से अपनी समस्या को लेकर एक दूसरे के पास व्यक्तिगत रूप से आयें और आमने-सामने समाधान निकालने का प्रयत्न करें। यदि समस्या का समाधान इस रीति से न निकले तो सलाह दी गई है कि मंडली के अन्य सदस्यों को साथ लेकर समस्या का समाधान निकाला जाय।

अपने पर्वतीय उपदेश में यीशु ख्रीष्ट ने चेलों को यह सिखाया कि, शांति और न्याय, पहले परमेश्वर के राज्य को ढूंढने और अपनी गलतियों के लिये पश्चताप करने, और दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करने से आता है, जैसा हम चाहते हैं कि दूसरे हमारे साथ करें। यीशु ने कहा, **"केवल उन्हीं से प्रेम न रखो, जो तुमसे प्रेम रखते हैं। क्योंकि अन्यजाति भी ऐसा करते हैं। परंतु मैं**

तुमसे कहता हूं अपने बैरियों से प्रेम रखो, और अपने सताने वालों के लिये प्रार्थना करो।"(मत्ती 5:43-48)। जो कुछ यीशु ख्रीष्ट ने कहा वह पूरी रीति से सार्थक है, और हमारे लिये भी वह यही चाहता है कि उसका अनुयायी होने की हैसियत से हम भी इस नये रूप में व्यवहार करें।

अपनी सेवकाई के अंत में यीशु ने कहा, 'जैसा पिता ने मुझे भेजा है, वैसे ही मैं भी तुम्हें भेजता हूं।' **(यूहन्ना 20:21)**। यीशु ने आगे यह भी कहा, 'इसलिये तुम जाकर सारी जातियों के लोगों को चेला बनाओ और उन्हें पिता और पुत्र और पवित्रात्मा के नाम से बपतिस्मा दो। और उन्हें सब बातें जो मैंने तुम्हें आज्ञा दी है, मानना सिखाओ।' **(मत्ती 28:18-20)**

इसके फलस्वरूप उस समय के प्रारंभिक चेलों ने सारे संसार में जाकर सुसमाचार का प्रचार किया और लोगों को इस नये मार्ग के विषय में शिक्षा देते गये, ताकि हर कहीं लोग परमेश्वर के साथ और एक दूसरे के साथ मेल-मिलाप कर लें।

प्रारंभिक मसीहियों के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती, यहूदियों और अन्यजातियों के बीच में जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक विभाजन या मतभेद था। विभिन्न पृष्ठभूमियों से लोगों को पवित्रात्मा से भरपूर होकर परमेश्वर के परिवार में मिलते हुए देखकर, चेलों ने इस बात को मान लिया कि, विभिन्न पृष्ठभूमियों के लोग नियमों और अनुष्ठानों या संस्कारों के द्वारा नहीं परंतु यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास लाने के द्वारा ही एक देह में होकर, एक शांति की संस्कृति में आगे बढ़ सकते हैं।

अगले कई सौ वर्षों तक ख्रीष्ट के अनुयायी युद्ध में भाग लेने से इंकार करते रहे। वे यही समझते थे कि उन्हें अपने शत्रुओं से प्रेम करने की आज्ञा मिली है, उन्हें मार डालने की आज्ञा नहीं। और जैसा कि संत पौलुस ने कुरिंथियों की दूसरी पत्री अध्याय 5:18 में कहा है कि, **'और सब बातें परमेश्वर की ओर से हैं, जिसने मसीह के द्वारा अपने आप हमारा मेल-मिलाप करा लिया। और मेल-मिलाप की सेवा हमें सौंप दी है।'**

इसलिये यदि आप उन प्रारंभिक विश्वासियों से पूछते तो मेरा विश्वास है वे कहते कि, **'लोगों का एक दूसरे के साथ और परमेश्वर के साथ मेल-मिलाप कराना हमारे कार्यो का केंद्र है।'**

Constantine

जब **कॉन्सटेंटाईन** ने कलीसिया को राज्य के साथ मिलाना प्रारंभ कर दिया, तब कलीसिया में प्रमुख परिवर्तन आने लगे। परंतु यीशु ने कहा था कि, 'मेरा राज्य इस संसार का राज्य नहीं है।' फिर भी कॉन्सटेंटाईन एक राजा था। कालांतर में यीशु ख्रीष्ट का राज्य जो कि लोगों की स्वत: इच्छानुसार ग्रहण किया गया एक राज्य था, और रोम जो एक सम्राट के द्वारा शाशित राज्य था, दोनों के बीच का अंतर एकदम धूमिल पड़ गया। इस कारण यह कहा जा सकता है कि, प्रारंभिक मसीहियों की मसीही दृढ़ विश्वास की स्पष्ट विचारधारा, एक प्रकार से एक समझौते का शिकार हो गई ।कलीसिया के अंदर कुछ लोग अधिक धनवान हो गये और कुछ लोग निर्धन ही रह गये। पहिले जो शांति के प्रवर्तक थे अब वे युद्ध में जाने लगे। सारे यूरोपीय प्रांतों में शुभसमाचार प्रचार, शांति स्थापना, और मसीही सेवकाई के बदले में उनकी सारी शक्ति बड़े-बड़े गिर्जे और भवन बनाने में खर्च कर दी गई। इस प्रकार के बड़े भवन बनाना उनके कार्यो का मुख्य केंद्र बन गया।

Augustine

उन दिनों में संत **ऑगस्टीन** का सारा ध्यान व्यक्तिगत नैतिक बातों पर लगा रहा, जैसे कि, पीयक्कड़पन, जुआ, लालच तथा व्यभिचार आदि। परंतु शांति और न्याय के विषय में उसकी शिक्षायें और उसके क्रिया- कलाप कलीसिया के अंदर पूरी रीति से सीमित हो गये, क्योंकि कलीसिया राज्य के साथ घुल-मिल गई थी। अपने शत्रुओं के साथ मेल-मिलाप ढूंढ़ने के बदले में, ऑगस्टीन यह विश्वास करने लगा कि मसीही विश्वास को धर्म-रक्षा की जरूरत है। इसी के साथ-साथ 'न्याय संगत युद्ध' की विचारधारा का विकास हुआ, जिसने कि परिस्थिति अनुसार कुछ संस्थाओं में मसीहियों को युद्ध और हिंसा का सहारा लेने के लिये प्रेरित किया। यही कारण है कि आज भी कई मसीही परंपराओं के लिये यह

विचारधारा, युद्ध के प्रति सकारात्मक रूख अपनाने का आधार बन गया।

Martin Luther

मार्टिन लूथर, ज्विंगली, और **कैल्विन** ने कई ऐसे कार्य किये जो अति सराहनीय थे। लूथर ने 'सामाजिक तिजोरी' की विचारधारा को प्रतिपादित किया, और कैल्विन ने मसीही सिद्धांतों के द्वारा समाज को प्रभावित करने की विचारधारा को आगे बढ़ाया। फिर भी उन्होंने ऑगस्टीन की तरह ही व्यक्तिगत क्षमा और दस आज्ञाओं के पालन करने पर जोर दिया, परंतु परिवर्त नकारी अनुग्रह, सुसमाचार-प्रचार और मेल-मिलाप कराने की सेवा के विषय में कोई विषेश शिक्षा नहीं दी।

प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट मसीही, **मेनो सायमन** तथा अन्य अगुवों के अधीन रहकर यह संघर्ष करने लगे कि, इस संसार में मसीह की देह का अंग बनकर भी कैसे जीवन व्यतीत करना चाहिये। वे इसके लिये एक सामान्य विचारधारा की तलाश में थे। उनका यह विश्वास था कि उनके जीवन में पवित्र आत्मा के कार्यों के कारण और एक दूसरे के प्रति उनके समर्पण के कारण, यीशु ख्रीष्ट के अनुयायी ख्रीष्ट की सदृष्यता को प्राप्त कर सकते हैं और उसकी तरह व्यवहार भी कर सकते हैं।

प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट मसीही अक्सर घरों में छोटे झुंडों में एकत्रित हुआ करते थे, जहां वे पवित्रात्मा की उपस्थिति का एहसास करते हुए बाइबल का अध्ययन करते थे ताकि एक दूसरे को सच्चा मसीही जीवन जीने की सलाह दे सकें। एनाबैप्टिस्ट मसीही चाहते थे कि केवल बाइबल ही उनका 'एकमात्र हथियार' बने। अपने अध्ययनों में उन्होंने आर्थिक सहभागिता पर, परमेश्वर के साथ और एक दुसरे के साथ, तथा अपने शत्रुओं के साथ भी मेल-मिलाप रखने पर जोर दिया।

धर्म-आंदोलन के काल में एनाबैप्टिस्ट आंदोलन एक करिश्माई या पवित्रात्मा का आंदोलन था।[19] उस समय एनाबैप्टिस्ट अगुवे, अन्य अगुवों की अपेक्षा पवित्रात्मा के परिवर्तनकारी सामर्थ के विषय में अधिक चर्चा करते थे। उनका विश्वास था कि पवित्रात्मा ने उन्हें चेला बनाने, सुसमाचार का प्रचार करने,

मेल-मिलाप की सेवा करने, और सादा जीवन व्यतीत करने के लिये सामर्थ प्रदान की है। सोलहवीं सदी के लिये एनाबैप्टिस्ट आंदोलन, एक सुसमाचार प्रचार का आंदोलन भी था। बड़े लगन और जोश के साथ कई प्रमुख अगुवे, अपने प्राणों की आहुति देकर भी सारे यूरोप में जाकर लोगों को परमेश्वर के साथ और एक दूसरे के साथ मेल कर लेने के लिये उत्प्रेरित करते रहे।**20** हजारों की संख्या में लोगों ने व्यक्तिगत रूप से यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास किया और वे सारे यूरोप में एनाबैप्टिस्ट लोगों की संगति में मिलने लगे। इसके अलावा, एनाबैप्टिस्ट लोगों ने अपने समय में सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में काफी योगदान दिया। एनाबैप्टिस्ट आंदोलन के कई स्थानीय समुदायों में लोग आर्थिक सहयोग और लोगों के साथ परस्पर न्यायपूर्ण समान व्यवहार की भावना के कारण प्रसिद्ध हो गये। तात्कालीन जमींदारी प्रथा के तानाशाही रवैये को लेकर, जब किसानों ने आवाज उठाना शुरू किया, तो एनाबैप्टिस्ट अगुवों ने उन बातों को लेकर सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं के विरूद्ध अपने विचारों को खुले रूप में प्रगट करते हुए लोगों का साथ दिया। उस समय के यूरोपीय राज्यों और जमींदारी प्रथा के विरूद्ध जगह-जगह छोटे मसीही झुंड वैकल्पिक समाज के रूप में उभरने लगे। यीशु ख्रीष्ट के सच्चे अनुयायी जो कि परमेश्वर की आत्मा के द्वारा परिवर्तित कर दिये गये थे और जो बपतिस्मा के द्वारा यीशु ख्रीष्ट की देह के अंग बन गये थे, उनके लिये यह असोचनीय था कि यदि मंडली का कोई सदस्य आवश्यक्ता में हो तो वे अपने अतिरिक्त धन को अपने पास ही रखे रहें।**21** बाइबल का अध्ययन करने के द्वारा और प्रतिदिन के जीवन में यीशु के पीछे चलने की दृढ़ निश्चयता के साथ एनाबैप्टिस्ट मसीही इस विश्वास में आ गये कि किसी भी प्रकार के युद्ध में भाग लोना अनुचित है। उस समय जब कि मुगल तुर्कों ने यूरोप पर चढ़ाई करना प्रारंभ कर दिया था तौभी प्रारंभिक शिष्यों की तरह एनाबैप्टिस्ट विश्वासियों ने भी सामरिक सेवा में भर्ती होने से इंकार कर दिया। अपने शत्रुओं के विरूद्ध लड़ाई करने के बदले में एनाबैप्टिस्ट मसीहियों ने यीशु का अनुसरण करने का निर्णय लिया, जिसके विषय में लिखा है कि,

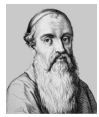
Menno Simmons

'वह गाली सुनकर गाली नहीं देता था, और दुख उठाकर किसी को भी धमकी नहीं देता था।' **(1 पतरस 2: 23)**। यदि आप उनसे पूछते तो, मेरा विश्वास है कि **मेनो साईमन** तथा अन्य प्रारंभिक एनाबैप्टिस्ट अगुवे प्रारंभिक शिष्यों के साथ मिलकर यही कहते कि, **'लोगों का परमेश्वर के साथ, और एक दूसरे के साथ मेल-मिलाप करवाना, हमारे कार्यो का केंद्र है।"**

इसका आज हमारे लिये क्या लगाव है? एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही यह विश्वास करते हैं कि;

1. हमें लोगों की सहायता करनी चाहिये कि वे परमेश्वर के साथ मेल कर सकें

जिस प्रकार से परमेश्वर ने यीशु ख्रीष्ट में होकर पहल करके अपने साथ, और एक दूसरे के साथ हमारा मेल कराया, उसी प्रकार से परमेश्वर हमसे भी यही चाहता है कि हम भी पहल करके अपने यरूशलेम, यहूदिया, सामरिया और पृथ्वी की छोर तक परमेश्वर के साथ लोगों का मेल करवाने में सहायक बनें। परमेश्वर ने हमें मेल-मिलाप की सेवा सौंपी है। एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के वर्तमान मसीही आज भी चेला बनाने, बपतिस्मा देने, और लोगों को उन सब बातों की शिक्षा देने के लिये समर्पित हैं जो कि यीशु ने अपने जीवन काल में सिखाया था। वे अपने परिचितों से चाहते हैं कि वे यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास करें, एक ख्रीष्ट केंद्रीय संगति में यीशु ख्रीष्ट के होकर रहें, और एक परिवर्तित जीवन व्यतीत करें। परमेश्वर के खोजी लोग, 'जितना अधिक यीशु ख्रीष्ट को समझते हैं उतना अधिक वे अपने आपको समर्पित भी करते हैं।' और उसी समय वे नया जन्म भी प्राप्त करते हैं ।22 उनको अपने जीवन में एक नई शुरूआत मिलती है। उनके पास जीने के लिये नयी मान्यतायें होती हैं और उन मान्यताओं को अपने जीवन में अमल में लाने के लिये उनके पास पवित्रात्मा की सामर्थ भी होती है। परमेश्वर के साथ मेल-मिलाप का जीवन एक परिवर्तित जीवन को जन्म देता है। यीशु ख्रीष्ट उसे ग्रहण करने वालों के विचारों को और उनकी संगति को और उनके चाल-चलन को भी बदल देता

है। वे मानसिक रूप से, भावनात्मक रूप से, शारीरिक रूप से, सामाजिक रूप से और राजनैतिक रूप से भी बदल जाते हैं। ये सारी बातें उन्हें इस संसार से एकदम भिन्न बना देती हैं।

2. हमें लोगों को एक दूसरे से मेल करने में सहायक बनना चाहिये

लोगों का मेल केवल परमेश्वर से ही नहीं, बरन् एक दूसरे के साथ भी होना चाहिये, जो कि हमारे कार्यों का केंद्र है। इसका तात्पर्य यह है कि हमें किसी भी फसाद के कारणों का पता लगाना होगा ताकि हम विवाद में फंसे लोगों का आपस में, सावधानी पूर्वक सुनने के द्वारा, सच्चे पश्चताप के द्वारा, नि:स्वार्थ क्षमा के द्वारा, उचित मेल मिलाप करवाने में मदद कर सकें।

सच्ची क्षमा न केवल हमारे व परमेश्वर के बीच ठोकर की दीवार को हटाती है बरन् इसके द्वारा कलीसिया में भी आपसी विभाजन की दीवार हट जाती है। पवित्र बियारी की संगति में भाग लेना, एक ऐसी संगति का अनुभव बनता है जो कि उस क्षमा को प्रदर्शित करता है जो हमें परमेश्वर की ओर से और एक दूसरे से भी मिलती है।

मसीहियों को चाहिये कि वे हरेक पृष्ठभूमि , लिंग और विचारधारा के लोगों के लिये आषीश का कारण बनें। जब कभी हम व्यक्तियों को या दो समूह के लोगों को विवाद की स्थिति में पाते हैं, तो हमें उनके बीच में केवल 'मेल-मिलाप के विषय' में ही सोचना चाहिये। परंतु हम लोगों की सहायता उसी सीमा तक कर सकते हैं जहां तक कि हम गये हैं। जबकि हम मेल-मिलाप के मार्ग में दूसरों की अगुवाई करते हैं, हमें स्वंय इस विचारधारा की समझ पर उन्नति करते हुए, निरंतर यह सोचना चाहिये कि उस मार्ग में आगे बढ़ने के लिये हमें और किस रीति से अपने आपको बदलना होगा।

3. इस संसार में हमें मेल मिलाप का राजदूत बनना है—

सुसमाचार-प्रचार और मेल-मिलाप की सेवा का एकीकरण या समायोजन, समझौते की आत्मा में ही संभव है। जबकि कुछ मसीही यही कहते हैं कि सुसमाचार-प्रचार हमारे कार्यों का केंद्र है,

कुछ हैं जो कि मेल-मिलाप को ही अपने कार्यों का केंद्र मानते हैं, परंतु यही कहना सबसे उत्तम होगा कि, 'मेल-मिलाप की सेवा ही हमारे जीवन का केंद्र है।' परमेश्वर का उद्देश्य यही है कि, **'वह सब वस्तुओं का उसी के द्वारा से अपने साथ मेल कर ले।'**

(कुलुस्सियों 1: 19-20)

वर्तमान एनाबैप्टिस्ट मसीही यह विश्वास करते हैं कि उद्धार का अर्थ जीवन में आमूल परिवर्तन है। यही कारण है कि वर्तमान एनाबैप्टिस्ट मसीही किसी भी प्रकार के युद्ध में भाग लेना नहीं चाहते। आधुनिक युद्ध-विद्या में सैनिकों को झूठ बोलना, घृणा करना और नष्ट करना आदि, सिखाया जाता है। परिवर्तित लोग इस प्रकार के कार्य नहीं करते। मेल करवाना लोगों को खुश करना नहीं है। यीशु ख्रीष्ट के परिवर्तित अनुयायी होने की हैसियत से, हमें बुराई और अन्याय के विरूद्ध जोरों से संघर्ष करना चाहिये। परंतु ऐसे नहीं जैसे कि अन्य लोग इनसे लड़ते हैं। हमारी 'लड़ाई' दूसरों की अपेक्षा भिन्न होनी चाहिये। पौलुस प्रेरित के साथ मिलकर हमें कहना चाहिये,

'क्योंकि यद्यपि हम शरीर से चलते-फिरते हैं, तौभी शरीर के अनुसार नहीं लड़ते। क्योंकि हमारी लड़ाई के हथियार शारीरिक नहीं।' (2 कुरिं. 10: 3-4)

इतिहास और मानव-अनुभव यही संकेत करते हैं कि हिंसा, और अधिक हिंसा की जनक होती है। हिंसा को केवल अहिंसा से और उन अन्यायों को सुधारने के द्वारा कम किया जा सकता है जो हिंसा के कारक होते हैं। हर समय और हर एक परिस्थिति में हमें इसलिये बुलाया गया है कि हम यीशु की आत्मा का और उसके नमूने का अनुसरण करें। यीशु ख्रीष्ट ने बम या बंदूक आदि किसी सामरिक हथियार के बदले में विवादों को सुलझाने के लिये, और उन्हें परमेश्वर के घराने में लाने के लिये; वचन का, और लोगों की चिंता जैसे अहिंसात्मक क्रिया-कलापों का उपयोग किया। हमारे विचार या हमारे रूख भी इसी प्रकार का होना चाहिये क्योंकि लिखा है कि,

'जैसा मसीह यीशु का स्वभाव था वैसा ही तुम्हारा भी स्वभाव हो।' (फिलि.2: 5)

मेल-मिलाप करवाना एक कठिन कार्य है। इसकी मांग है कि हम लोगों का परमेश्वर के साथ, एक दूसरे के साथ और यहां तक कि अपने शत्रुओं के साथ मेल-मिलाप करवाने के लिये अपने प्राणों की भी बाजी लगा दें। परंतु उससे भी बढ़कर आनंद तब होता है जब हम स्वंय मेल-मिलाप का जीवन व्यतीत करते हुये दूसरों को भी परमेश्वर के साथ तथा परस्पर एक दूसरे के साथ मेल करने में सहायक हो सकें।

सारांश में हम यह कह सकते हैं कि, एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीहियों का यह विश्वास कि वे इसलिये बुलाये गये हैं ताकि वे:

1. लोगों का परमेश्वर के साथ मेल करवाने में सहायक हों।
2. लोगों का परस्पर मेल करवाने में सहायक बनें।
3. इस संसार में मेल-मिलाप के राजदूत बनकर रहें। मेल-मिलाप उनके जीवन का केंद्र है ।

क्या आप भी एक एनाबैप्टिस्ट मसीही हैं?

उपसंहार

मसीही विश्वास की एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के विषय में हम क्या सोचते हैं? आज से एक सौ वर्ष पहले, प्रोफेसर रूफुस एम. जोन्स ने यह दावा किया था कि, 'अपने अंत:करण में स्वतंत्रता का अहसास करने का सबसे बड़ा सिद्धांत, कलीसिया और राज्य का अलगाव, धार्मिक विचारों में स्वंय-सेवा की भावना, किसी भी प्रजातंत्र के लिये अति आवश्यक है, जो कि धर्म -आंदोलन-काल के एनाबैप्टिस्ट विचारधारा की देन है। इन दिलेर अगुवों ने इन सिद्धांतों को बड़े ही स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया और मसीही संसार के सामने यह चुनौती रखी कि वे इन सिद्धांतों का अनुसरण करें।'**23**

क्या अधो-लिखित वक्तव्य मसीही विश्वास के विषय में आपकी विचारधारा को संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं। यदि ऐसी बात है तो फिर आप भी एनाबैप्टिस्ट विचारधारा के मसीही हैं!

यीशु ख्रीष्ट मेरे विश्वास का केंद्र है।

- मैं अपनी आंखें यीशु ख्रीष्ट पर लगाता हूं जो हमारे विश्वास का कर्ता और सिद्ध करनेवाला है।
- मैं वचन की व्याख्या ख्रीष्ट-केंद्रीय नैतिकता की विचारधारा के आधार पर करता हूं।
- मेरे लिये मसीहियत एक चेलापन, और प्रतिदिन के जीवन में यीशु ख्रीष्ट के पीछे चलना है।

मांडलिक संगति मेरे जीवन का केंद्र है।

- मेरा विश्वास है कि क्षमा ही मसीही संगति को संभव बनाता है
- हमारे समय में वचन को लागू करने के लिये मैं इसका अध्ययन दूसरों के साथ मिलकर करता हूं।

- मैं यह अंगीकार करता हूं कि किसी भी स्वस्थ्य कलीसिया के लिये छोटे समूहों में साक्षात् संगति अति आवश्यक है।
  मेल-मिलाप की सेवा मेरे जीवन का केंद्र है।
- मैं इसलिये बुलाया गया हूं कि लोगों की सहायता करूं कि, वे यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास लाने के द्वारा परमेश्वर के साथ मेल करें।
- मैं विश्वास करता हूं कि मेल-मिलाप की सेवा में, सुसमाचार-प्रचार, तथा परस्पर मेल करवाना, दोनों ही सम्मिलित हैं।
- मैं हर प्रकार के अन्याय का, और हिंसा का तिरस्कार करता हूं, और युद्ध तथा किसी भी प्रकार के विवाद को सुलझाने के लिये हर प्रकार के शांतिपूर्ण विकल्प का समर्थक हूं।

Endnotes

1. Jack Trout, *Differentiate or Die* (New York: John Wiley and Sons, 2000).
2. James C. Collins and Jerry I. Porras, "Building your Company's Vision," in *Harvard Business Review* (Lewes, Del,: Harvard Business Publishing, September 1996).
3. This alliteration of values is adapted from Grace Davie by Alan Kreider in his book., *The Change of Conversion and the Origin of Christendom* (Eugene, Ore,: Wipf and Stock Publishers, 1999), pp.xiv-xvi.
4. Harold S. Bender, *The Anabaptist Vision* (Scottdale. Pa.: Herald Press, 1944).
5. For a well-researched study of the changes to the process of incorporating new believers into church membership. *see ibid*., Alan Krieder, *The Change of Conversion.*
6. For a biography of Constantine, see William Smith, ed., *A Dictionary of Christian Biography*, Vol. 1 (New York: AMS Press, 1974), pp. 623-649.
7. For an outline of Augustine's life and theology, see Erwin Fahlbush, ed., *The Encyclopedia of Christianity,* Vol.1 (Grand Rapids. Mich.: Eerdmans Publishing, 1999). pp. 159-165.
8. John D. Roth, *Stories: How Mennonites Came to Be* (Scottdale, Pa.: Herald Pres, 2006). See chapter 2 for descriptions of the revolt, reform, and renewal of the Reformation.
9. For further understanding on the various streams of Anabaptism, see C. Arnold Snyder, *Anabaptist History and Theology* (Kitchener, Ont.: Pandora Press, 1997).
10. See *Anabaptism in Outline,* edited by Walter Klassen (Scottdale, Pa.: Herald Press, 1981). for primary sources related to themes that were important to the Anabaptists.
11. *Ibid.,* pp. 23-24, 72-73 and 140ff.
12. Peter Kehler was a colleague in mission. He served in Taiwan from 1959-1975 and 1991-1993.
13. For more on the theme of political involvement, see John H. Redekop, *Politics Under God* (Scottdale, Pa.: Herald Press . 2007).
14. John D. Roth, *Stories: How Mennonites Came to Be* (Scottdale, Pa.: Herald Press, 2006), chapter 4.
15. William A. Beckham, *The Second Reformation: Reshaping the Church for the 21st Century* (Houston, Tex.: Touch Outreach Ministries, 1998), pp. 25-26.

16. Palmer Becker, *Called to Care and Called to Equip* (Scottdale,
Pa.: Herald Press, 1993).
17. *Ibid*., Alan Kreider, *The Change of Conversion,* pp.xiv-xvi.
18. Walter Klassen, *Living at the End of Ages* (Lanham, Md.: University Press of America, 1992), chapter 6, "The age of the Spirit."
19. Hyoung Min Kim, *Sixteen-Century Anabaptist Evangelism* (Ann Arbor, Mich.: ProQuest, 2002).
20. For contemporary application of how discipleship relates to issues of justice and social action, see Ronald J. Sider, *I Am Not a Social Activist* (Scottdale, Pa.: Herald Press. 2008).
21. Samuel Shoemaker, *How to Become a Christian* (New York, N.Y.: Harper and Row, 1953), P. 71.
22. *The Recovery of the Anabaptists Vision,* edited by Guy F. Hershberger (Scottdale, Pa.: Herald Press, 1957), pp. 29-30. This volume also includes a wealth of essays on the rise and theology of Anabaptism.

परिचर्चा के लिये प्रश्न और परिदृष्य

मूल मान्यता क्रमांक नंबर 1 यीशु ख्रीष्ट हमारे विश्वास का केंद्र है

और विश्वास के कर्त्ता और सिद्ध करनेवाले यीशु की ओर ताकते रहें। (इब्रानी 12: 2)

कई अन्य मसीही इन बातों पर जोर देते हैं;

1. ख्रीष्ट की मृत्यु पर

कई मसीही मूल रूप से परमेश्वर की पवित्रता पर अपना ध्यान केंद्रित करते हुए व्यक्तिगत उद्धार की आवश्यक्ता पर जोर देते हैं। वे यह कहते हैं कि 'यीशु ख्रीष्ट अपना प्राण देने आया।' इसी विचारधारा के साथ वे यीशु ख्रीष्ट के जीवन, उसकी शिक्षा, और उसकी सामर्थ दायी आत्मा पर कम जोर देते हैं। उनका विचार है कि मसीहियत मूल रूप से परमेश्वर की क्षमा प्राप्त करना है।

अपितु एनाबैप्टिस्ट मसीही इन बातों पर जोर देते हैं;

1. ख्रीष्ट का जीवन

एनाबैप्टिस्ट मसीही परमेश्वर की पवित्रता और उसकी अनुग्रहकारी क्षमा का अंगीकार करते हैं, परंतु वे इस बात पर जोर देते हैं कि 'यीशु ख्रीष्ट इस संसार में रहने के लिये आया।' उसका निष्पाप जीवन भी उसकी मृत्यु का कारण बनी। परंतु पुनरूत्थित प्रभु यीशु ख्रीष्ट हमें उसके पीछे चलने की सामर्थ प्रदान करता है। इसलिये, 'मसीहियत मूल रूप से एक चेलापन है।'

क्या आप इस विचारधारा से सहमत हैं कि, 'मसीहियत' केवल चेलापन है?

2. एक 'सपाट' बाइबल

कई मसीही अपने लिये अंतिम अधिकार के रूप में केवल बाइबल को ही देखते हैं और वे यीशु ख्रीष्ट को अपना अंतिम अधिकार नहीं मानते। इसलिये उनके प्रतिदिन के जीवन की अगुवाई उन्हें उनकी परिस्थिति अनुसार बाइबल से ही मिलती है। उनके लिये यह जरूरी नहीं है कि उनके निर्णय यीशु की आत्मा और शिक्षा से समन्वय रखें।

2.'ख्रीष्ट-केंद्रित' बाइबल

जब कि एनाबैप्टिस्ट मसीही यह अंगीकार करते हैं कि हरेक पवित्र शास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है, तौभी यीशु ख्रीष्ट परमेश्वर का अंतिम संपूर्ण प्रगटीकरण है, और किसी भी निर्णय के लिये वही अंतिम अधिकार है। यीशु ख्रीष्ट ही पुराने नियम का पूरक है और इसलिये वही हमारी व्यक्तिगत् और सामाजिक नैतिकता का मूल आधार है।

कृपया एक 'सपाट' बाइबल और 'ख्रीष्ट केंद्रित' बाइबल के बीच के अंतर को समझायें?

3. प्रशासन ही अंतिम अधिकार है

अधिकांश मसीही विश्वास करते हैं कि, चूंकि प्रशासनिक अगुवे परमेश्वर की ओर से ठहराये जाते हैं, इसलिये उनकी आज्ञा का पालन करना जरूरी है। यहां तक कि यदि उनकी आज्ञायें भारी भी हों और ख्रीष्ट की शिक्षा के विपरीत भी हों अथवा हमारे विवेक के विरूद्ध भी हों तौभी उनकी आज्ञा का पालन किया जाय।

3. यीशु ख्रीष्ट ही अंतिम अधिकार है

एनाबैप्टिस्ट मसीही यह अंगीकार करते हैं कि प्रशासनिक तंत्र परमेश्वर के द्वारा ही ठहराये जाते हैं ताकि निरपेक्ष संसार में न्याय व्यवस्था कायम रहे। तौभी किसी भी प्रशासनिक तंत्र की मांगे यीशु ख्रीष्ट के प्रभुत्व को उलट नहीं सकतीं।

जब आप कहते हैं कि, 'यीशु ही प्रभु है' तब यह आपके लिये क्या मायने रखता है?

मूल मान्यता क्रमांक नंबर 2 मांडलिक संगति हमारे जीवन का केंद्र है

'और वे प्रतिदिन एक मन होकर मंदिर में इकट्ठे होते थे, और घर-घर रोटी तोड़ते हुये आनन्द और मन की सीधाई से भोजन किया करते थे। और परमेश्वर की स्तुति करते थे।'

(प्रेरितों के काम **2: 46-47**)

कई अन्य मसीही इन बातों पर जोर देते हैं

कई अन्य मसीही इन बातों पर जोर देते हैं	अपितु एनाबैप्टिस्ट मसीही इन बातों पर जोर देते हैं;
1. लंबवत् क्षमा कई मसीही परमेश्वर की ओर से मिलने वाली लंबवत् क्षमा पर अधिक जोर देते हुए, एक दूसरे को दी जाने वाली परस्पर समानांतर क्षमा पर कम जोर देते हैं। इसलिये क्षमा को व्यक्तिगत रूप से उद्धार और अनंत जीवन पाने का जरिया ही माना जाता है।	**1. समानांतर क्षमा** मसीहियों को परमेश्वर की ओर से लंबवत् क्षमा की भी आवश्यक्ता है और परस्पर समानांतर क्षमा की भी आवश्यक्ता है। क्षमा मांडलिक संगति को उन्नत बनाती है और परस्पर शांतिपूर्ण संगति का श्रोत होती है।

क्या क्षमा मांडलिक जीवन में किसी प्रकार का योगदान देता है?

2. व्यक्तिगत व्याख्या

कई मसीही वचन की व्याख्या व्यक्तिगत समझ और अनुभव के आधार पर करना चाहते हैं। दूसरी ओर कुछ मसीही ऐसे हैं जो पूरी रीति से वचन की व्याख्या के लिये प्रशिक्षित शिक्षकों और पासवानों पर आधारित रहना चाहते हैं।

2. सामूहिक व्याख्या

एनाबैप्टिस्ट विश्वासी यह विश्वास करते हैं कि बाइबल के व्यक्तिगत अध्ययन को सामूहिक अध्ययन के साथ संयोजित होना चाहिये। झुंड के सदस्य अपने आपको एक दूसरे से सलाह लेने और देने के लिये समर्पित करते है

आप अपनी मंडली में बाइबल की व्याख्या किस प्रकार से करते हैं?

3. बड़े गिर्जे भवनों में संगति

कई मसीही यह सोचते हैं कि आराधना के लिये मंडली को गिर्जे भवनों में एक इकाई के रूप में एकत्रित होना चाहिये। इसलिये, कई बार कलीसिया को एक संरचना के रूप में देखा जाता है, एक ऐसी संस्था जो कि रविवार को केवल आराधना की औपचारिकतायें पूरी करने के लिये एकत्रित होती है। यदि किसी भी स्वस्थ्य कलीसिया के लिये साक्षात् छोटे समूहों की सभायें आवश्यक हैं तो फिर—

3. छोटे समूहों की संगति

एनाबैप्टिस्ट विश्वासी कलीसिया को एक परिवार के रूप में देखते हैं। स्वस्थ्य कलीसियायें अक्सर छोटे समूहों के एक जाल में गुथी हुई होती हैं जहां मंडली के सदस्य आपस की संगति, बाइबल अध्ययन और प्रार्थना में एक दुसरे के साथ जुड़े हुए होते हैं।

आपके विचारानुसार ऐसी छोटी सभायें आपकी मंडली में कैसे संभव हो सकती हैं?

मूल मान्यता क्रमांक 3 मेल-मिलाप हमारे कार्यों का केंद्र है

"और सब बातें परमेश्वर की ओर से हैं, जिसने मसीह के द्वारा अपने आप हमारा मेल-मिलाप कर लिया, और मेल-मिलाप की सेवा हमें सौंप दी है।" (2 कुरिंथियों 5: 18)

कई मसीही इस बात पर जोर देते हैं कि—

1. विश्वास के द्वारा धार्मिकता

कई मसीही प्राथमिक रूप से परमेश्वर की पवित्रता पर जोर देते हुए यह कहते हैं कि हमें यीशु ख्रीष्ट के प्रायश्चितकारी बलिदान पर विश्वास के द्वारा धर्मी ठहरना चाहिये। इसलिये मन परिवर्तन का अर्थ है पापों की क्षमा प्राप्त करके स्वर्ग के लिये सुरक्षित होना।

अपितु एनाबैप्टिस्ट मसीही इन बातों पर जोर देते हैं—

1. जीवन का आमूल परिवर्तन

एनाबैप्टिस्ट मसीही हमेशा परमेश्वर की प्रेमपूर्ण सुखदायी प्रकृति पर जोर देते हैं। उनकी यही अभिलाषा होती है कि वे परमेश्वर की आत्मा के द्वारा से परिवर्तित होकर अपने कार्यों और विचारों में ख्रीष्ट की सदृष्यता को प्राप्त करें। इसलिये मन फिराने का अर्थ है परमेश्वर से मेल-मिलाप करके प्रति दिन के जीवन के लिये ख्रीष्ट की सामर्थ को प्राप्त करना।

परमेश्वर के दोनों ही स्वभाव आवश्यक हैं। आप परमेश्वर के किस स्वभाव पर अधिक जोर देते हैं?

2. व्यक्तिगत उद्धार

कई मसीही मेल मिलाप को व्यक्तिगत रूप से लेते हैं। उनके विचारानुसार मेल-मिलाप की सेवा और सामाजिक-सेवा , सुसमाचार में अतिरिक्त रूप से जोड़े गये हैं, और ये सुसमाचार के अभिन्न भाग नहीं हैं।

2. मेल मिलाप का जीवन

एनाबैप्टिस्ट मसीही अपने व्यक्तिगत व सामाजिक दोनों ही प्रकार के जीवन में मेल- मिलाप के विषय में सोचते हैं। मेल-मिलाप के लिये सुसमाचार-प्रचार व मेल करवाना दोनों ही सेवायें आवश्यक हैं।

मत्ती रचित सुसमाचार अध्याय 18 के अनुसार मेल-मिलाप की सेवा के विभिन्न चरण कौन-कौन से हैं?

3. सामरिक सेवा

कई मसीही प्रशासनिक अधिकारियों की आज्ञा मानते हुए यीशु की शिक्षा और अपने विवेक के विरूद्ध भी कार्य करने से पीछे नहीं हटते। कई लोग 'विमोचक या उद्धारक हिंसा' और 'न्याय पूर्ण युद्ध' पर विश्वास करते हैं। इसलिये जब कभी प्रशासन के द्वारा उन्हें सामरिक सेवा के लिये बुलाया जाता है तो वे उस सेवा को सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं।

3. वैकल्पिक सेवा

एनाबैप्टिस्ट लोग प्रशासनिक अधिकारियों की आज्ञा का पालन वहीं तक करते हैं, जहां तक कि ख्रीष्ट के प्रति उनकी आज्ञाकारिता उन्हें छूट देगी। वे हिंसा आदि में भाग लेने से इंकार कर देंगे। अन्याय को दूर करने का प्रयास करना और अपने शत्रुओं से मेल- मिलाप करना उनके लिये महत्वपूर्ण है। और सामरिक सेवा के विकल्प के रूप में वे किसी भी प्रकार के विवाद को दूर करने का भरसक प्रयत्न करना चाहेंगे।

क्या सामरिक सेवा के विकल्प के रूप में कुछ मेल मिलाप की सेवायें हो सकती हैं?

FOR FURTHER READING —

- BENDER, Harold S., *The Anabaptist Vision* (Scottdale. Pa.: Herald Press, 1944).
- BLOUGH, Neal, *Christ in Our Midst: Incarnation, Church and Discipleship in Theology of Pilgram Markpeck* (Kitchener, Ont,: Pandora press, 2007).
- *Confession of faith in a Mennonite perspective* (Scott dale, , Pa.: herald Press, 1995).
- DRESCHER, John M., *Why I am a Conscientious Objector* (Morgantown, Pa.: Masthof Press 2007).
- HERSHBERGER, Guy F., ed., *The Recovery of the Anabaptist Vision* (Scott dale, Pa., Herald Press, 1957).
- KLAASSEN, Walter, *Anabaptism in Outline* (Scott dale , Pa.: Herald Press, 1981).
- KLAASSEN, Walter, *Anabaptism: Neither Catholic Nor Protestant, 3rd edition* (Kitchener, Ont. : Pandora Press, 2001).
- KREIDEER, Alan, *The Change of Conversion and the origin of Christendom* (Eugene, Ore., Wipf and Stock Publishers, 1999).
- MURRAY, Stuart, *The Naked Anabaptist: The Bare Essentials of a Radical Faith* (Scott dale, Pa.: herald Press, 2010).
- NEUFELD, Alfred, *What We Believe Together* (Intercourse, Pa.: Good Books, 2007).

- Roth, John D., *Stories: How Mennonites Came to Be* (Scott dale, Pa.: Herald Press, 2006).
- SNYDER, C. Arnold, *Anabaptist History and Theology, revised student edition* (Kitchener, Ont.: Pandora Press, 1995).
- SNYDER, C. Arnold, *From Anabaptist Seed* (Kitchener, Ont.: Pandora Press , 1999).